हरिदास संस्कृत सीरीज ३७७

वामकेश्वरीमतम्

हिन्दी-व्याख्यासहितम्

हिन्दीभाष्यकार

कपिलदेव नारायण

हरिदास संस्कृत सीरीज
३७७

***

वामकेश्वरीमतम्

हिन्दी-व्याख्यासहितम्

हिन्दीभाष्यकार
कपिलदेव नारायण

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०६८, सन् २०१२

ISBN : 978-81-7080-382-9

के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice@sify.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

प्रकाशकीय

श्रीविद्या ललिता महात्रिपुरसुन्दरी की आराधना की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक 'वामकेश्वरीमतम्' की व्याख्या राष्ट्रभाषा हिन्दी में विद्वान् साधक से कराकर आपकी सेवा में प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। कहा है—

यत्रास्ति भोग न तत्र मोक्ष
यत्रास्ति मोक्ष न तत्र भोगः।
श्रीसुन्दरी सेवा तत्पराणां
भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव॥

आशा है भोग, मोक्ष दोनों की प्राप्ति के लिये आप श्रीयन्त्र पूजन से साधन करेंगे।

—प्रकाशक

भूमिका

यह पुस्तक 'वामकेश्वरीमतम्' वामकेश्वर तन्त्र का पहला भाग है। कुछ विद्वान् वामकेश्वरतन्त्र के पहले भाग को 'वामकेश्वरीमतम्', दूसरे भाग को 'नित्या-षोडषीकार्णव' और तीसरे भाग को 'योगिनी हृदय' मानते हैं; परन्तु अब ये तीनों ग्रन्थ पृथक्-पृथक् स्वतन्त्र रूप से प्रकाशित हैं। 'वामकेश्वरीमतम्' काश्मीर सरकार द्वारा प्रकाशित तांत्रिक सीरिज या तान्त्रिक ग्रन्थमाला के क्रमांक ६६ पर प्रकाशित है।

वामकेश्वरतन्त्र श्रीविद्या उपासना का एक सर्वोत्तम मान्य ग्रन्थ है। अनेक तन्त्र ग्रन्थों में इसके उद्धरण मिलते हैं। वामकेश्वरतन्त्र पर बहुत टीका और भाष्य उपलब्ध हैं। इससे यह कहा जा सकता है कि यह श्रीविद्या उपासना का बहुत महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। आद्य शंकराचार्य की सौन्दर्यलहरी के व्याख्याकार श्रीलक्ष्मीधर ने श्लोक ३१ में इसे पूर्ववर्त्ती ६४ तन्त्रों के बाद पैंसठवा तन्त्र कहा है। चौंसठ तन्त्रों का उल्लेख जयरथकृत तन्त्रालोकविवेक, श्रीकण्ठ संहिता, कुलचूड़ामणि, नित्याषोडशीकार्णव, सर्वोल्लासतन्त्र और महासिद्धसारतन्त्र में विष्णुक्रान्ता के ६४ विष्णुक्रान्ता के ६४ अश्वक्रान्ता के ६४ तन्त्र परिगणित है। इसके सम्बन्ध में विद्वानों के मतैक्य नहीं है। किन्तु लक्ष्मीधर वैष्णव थे इसलिये उन्होंने विष्णुक्रान्त के चौंसठ तन्त्रों के बाद वामकेश्वरतन्त्र को पैसठवाँ तन्त्र माना है।

'वामकेश्वरीमतम्' में वामकेश्वरी के सन्धि विच्छेद करने पर वामक और ईश्वरी दो शब्द बनते हैं। वामक से वाममार्ग माना जा सकता है। ईश्वरी देवी के लिये प्रयुक्त होता है। 'मतम्' का अर्थ मान्य होता है। अत: कहा जा सकता है और विद्वानों के मत भी हैं कि वामकेश्वरीमतम् वाममार्ग प्रधान कौलमार्ग का ग्रन्थ है।

श्रीविद्या ललिता महात्रिपुरसुन्दरी को वामकेश्वरी कहा गया है, जो सृष्टि, स्थिति और लय करने वाली हैं। यह श्रीचक्र के रूप में प्रकट होती हैं। श्रीचक्र काल चक्र का ही स्वरूप है। इस ग्रन्थ में बाहरी पूजा पाठ से अधिक बल आन्तरिक उपासना पर दिया गया है। यह कौलमत के प्रमुख ग्रन्थों में से एक है। वामकेश्वरीमतम् को समझने में कठिनाई होती है; क्योंकि इसकी भाषा में प्रतीक या संकेत शब्दों के प्रयोग अधिक है। मन्त्रों, यन्त्रों के उद्धार में पृथक् अक्षरों को सांकेतिक शब्दों में प्रयोग किया गया है। इन्हीं बीजों से पूजन यन्त्र और मन्त्र का निर्माण होता है। प्रथम

पटल में अष्टमातृका देवियों के लिये प्रयुक्त प्रतीक देखा जा सकता है। चौथे पटल के श्लोक ४५-४६ में काम के वर्णन हैं। पर वास्तव में ये कामदेव पाँच बीजों के वर्णन हैं। उद्धार करने पर कामदेव के पाँच बीज ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं और स्त्रीं हैं। श्लोकों में इनके यन्त्रों के निर्माण के भी वर्णन हैं।

इन संकेतों को दीक्षित शिष्यों को गुरुदेव बतलाते हैं। कौल प्रतीक जैसे चौरास्ता, श्मशांन भूमि, शराब आदि का वास्तविक अर्थ प्रत्यक्ष अर्थ से भिन्न है। सर्वसाधारण को समझने के लिये इन कूट सांकेतिक शब्दों को सरल राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रस्तुत करनके पाठकों के करकमलों में समर्पित करते हुएं मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

स्वरूपावस्थित कपिल देव नारायण

विषयानुक्रमणिका

।।श्री।।

वामकेश्वरीमतम्

प्रथमः पटलः

गणेशग्रहनक्षत्रयोगिनीराशिरूपिणीम् ।
देवीं मन्त्रमयीं नौमि मातृकां पीठरूपिणीम्।।१।।

गणेश, ग्रह, नक्षत्र, योगिनी, राशि और मातृकापीठरूपिणी मन्त्रमयी देवी को हम प्रणाम करते हैं। इस ग्रन्थ के १ से १२ तक के श्लोकों को सर्वसिद्धिकृत स्तोत्र कहा जाता है। यह इसलिये कि 'देवं भूत्वा देवं यजत' के अनुसार विविध न्यास जाल से मनुष्य देवता हो जाता है। ऋषिन्यास, करन्यास, अंगन्यास और मातृकान्यास से मनुष्य देवता बन जाता है। इन न्यासों में सर्वश्रेष्ठ न्यास षोढ़ान्यास को कहते हैं। इन छः प्रकार के न्यासों में माता जी ही गणेश, ग्रह, नक्षत्र, योगिनी, राशि और पीठ रूप में साधक के देह में विद्यमान हो जाती हैं। इसलिये सभी सिद्धियाँ शीघ्र मिल जाती हैं। गणेश ध्यान में ५१ गणेशों का न्यास शरीर के निश्चित अंगों में किया जाता है। ये हैं—

[१]—१. विघ्नराज, २. विनायक, ३. शिवोत्तम, ४. विघ्नहर, ५. विघ्नकर्ता, ६. विघ्नराज, ७. गणनायक, ८. एकदन्त, ९. द्विदन्त, १०, गजवक्त्र, ११. निरंजन, १२, कपर्दभृत, १३. दीर्घमुख, १४. शंकुकर्ण, १५. वृषध्वज, १६. गणनाथ, १७. गजेन्द्र, १८. शूर्पकर्ण, १९. त्रिलोचन, २०. लम्बोदर, २१. महानाद, २२. चतुर्मूर्ति, २३. सदाशिव, २४. आमोद, २५. दुर्मुख, २६. सुमुख, २७. प्रमोद, २८. एकपाद, २९. द्विजिह्व, ३०. शूर, ३१. वीर, ३२. षण्मुख, ३३. वरद, ३४. वामदेव, ३५. वक्रतुण्ड, ३६. द्विरण्डक, ३७. द्वितुण्ड, ३८. सेनानी, ३९. ग्रामण्य, ४०. मत, ४१. विमत्त, ४२. मत्तवाहन, ४३. जटी, ४४. मुण्डी, ४५. खड्गी, ४६. वरेण्य, ४७. वृषकेतन, ४८. भक्ष्यप्रिय, ४९. गणेश, ५०. मेघनाद, ५१ गणेश्वर।

[२]—ग्रहन्यास में अंग के निश्चित स्थानों में नवग्रहों का न्यास किया जाता है। ये नवग्रह हैं—१. सूर्य, २. चन्द्र, ३. मंगल, ४. बुध, ५. बृहस्पति, ६. शुक्र, ७. शनैश्चर, ८. राहु, ९. केतु।

[३]—नक्षत्र न्यास में सत्ताईस नक्षत्रों का न्यास निश्चित अंगों में किया जाता है। ये हैं—

१. अश्विनी, २. भरणी, ३. कृत्तिका, ४. रोहिणी, ५. मृगशिरा, ६. आर्द्रा, ७. पुनर्वसु, ८. पुष्य, ९. आश्लेषा, १० मघा, ११. पूर्वफाल्गुनी, १२. उत्तरफाल्गुनी, १३. हस्त, १४. चित्रा, १५. स्वाति, १६. विशाखा, १७. अनुराधा, १८. ज्येष्ठा, १९. मूल, २०. पूर्वाषाढ़, २१. उत्तराषाढ़, २२. श्रवण, २३. धनिष्ठा, २४. शततारका, २५. पूर्वभाद्र, २६. उत्तरभाद्र, २७. रेवती।

[४]—योगिनीन्यास में शक्तियों के साथ इन योगिनियों का न्यास होता है—

१. डाकिनी, २. राकिनी, ३. लाकिनी, ४. काकिनी, ५. साकिनी, ६. हाकिनी, ७. याकिनी का न्यास होता है।

[५]—राशिन्यास में बारह राशियों का न्यास होता है। ये हैं—

१. मेष, २. वृष, ३. मिथुन, ४. कर्क, ५. सिंह, ६. कन्या, ७ तुला, ८. वृश्चिक, ९. धनु, १०. मकर, ११. कुम्भ, १२ मीन।

[६]—पीठन्यास में इक्यावन शक्तिपीठों का न्यास होता है। ये हैं—

१. कामरूप, २. वाराणसी, ३. नेपाल, ४. पौण्ड्रवर्धन, ५. काश्मीर, ६. कान्यकुब्ज, ७. पूर्णशैल, ८. अर्बुदाचल, ९. आम्रातकेश्वर, १०. एकाम्राय, ११. त्रिस्रोत, १२. कामकोटि, १३. कैलास, १४. भृगुनगर, १५. केदार, १६. चन्द्रपुष्करिणी, १७. श्रीपुर, १८. ओंकार, १९. जालन्धर, २०. मालवा, २१. कुलान्तक, २२. देवीकोट, २३. गोकर्ण, २४. मारुतेश्वर, २५. अट्टहास, २६. विरजा, २७. राजगेह, २८. महापथ, २९. कोलापुर, ३०. एलापुर, ३१. कालेश्वर, ३२. जयन्ती, ३३. उज्जियनी, ३४. चित्रा, ३५. क्षीरिका, ३६. हस्तिनापुर, ३७. उड्डीश, ३८. प्रयाग, ३९. षष्ठीश, ४०. मायापुर, ४१. जलेश, ४२. मलय, ४३. श्रीशैल, ४४. मेरु, ४५. गिरिवर, ४६. महेन्द्र, ४७. वायव, ४८. हिरण्यपुर, ४९. महालक्ष्मीपुर ५०. ओड्यारा, ५१. छाच्छत्र।

मैं उस मातृका परमेश्वरी को प्रणाम करता हूँ, जो सभी मन्त्रों में विद्यमान रहती हैं। श्रीविद्यार्णव श्रीविद्याउपासना के प्रमुख ग्रन्थों में से एक है। उसमें सभी देवी, देवताओं के मन्त्रों का वर्णन है।

प्रणमामि महादेवीं मातृकां परमेश्वरीम्।
कालहल्लोहलोल्लोलकलनाशमकारिणीम् ।।२।।

परमेश्वरी मातृका महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जो काल के लघुतम मान लव त्रुटि के रूप में हैं और जो प्रलयकाल हैं। जो विश्व का सृजन करती हैं और उसका विनाश करती हैं।

यदक्षरैकमात्रेऽपि संसिद्धे स्पर्धते नरः।
रविताक्ष्येन्दुकन्दर्पशङ्करानलविष्णुभिः ॥३॥

संस्कृत के इक्यावन वर्णों की मातृकारूपिणी देवी के एक अक्षर के सिद्ध होने पर मनुष्य सूर्य के समान तेजस्वी, गरुड़ के समान बलवान, चन्द्रमा के समान किरणों की छटा छिटकाने वाला, कामदेव के समान संसार को मोहित करने वाला, शिव शंकर के समान कर्त्ता धर्ता, अग्नि के समान ज्वाला प्रकाश वाला और विष्णु के समान जगत की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करने वाला हो जाता है। एकाक्षरी मन्त्र 'ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ' है। इनकी सिद्धि करने के लिये तथा अन्य एकाक्षर मन्त्र को सिद्ध करने के लिये पृथक्-पृथक् विधि विधान है।

यदक्षरशशिज्योत्स्नामण्डितं भुवनत्रयम्।
वन्दे सर्वेश्वरीं देवीं महाश्रीसिद्धमातृकाम्॥४॥

मैं उस श्री सिद्धमातृकारूपिणी महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जिनकी इक्यावन वर्णों की माला रूपी चन्द्र किरणों से तीनों लोक प्रकाशमान हैं। तीनों लोकों में अक्षरों का प्रकाश व्याप्त है। इस प्रकार की सर्वेश्वरी महाश्रीसिद्धमातृका को प्रणाम करता हूँ। श्रुति वचन है—'अस्तमित आदित्ये चन्द्रे अस्तमिते किं ज्योति? पुरुष वाग्ज्योनि रिति।' सूर्य और चन्द्र के अस्त होने पर कौन-सी ज्योति रहती है? पुरुष की वाणी की ज्योति ही रहती है। वाणी ही अन्दर-बाहर व्याप्त रहती है।

यदक्षरमहासूत्रप्रोतमेतज्जगत्त्रयम् ।
ब्रह्माण्डादिकटाहान्तं वन्दे तां सिद्धमातृकाम्॥५॥

ब्रह्माण्ड रूपी कड़ाह के आदि से अन्त तक तीनों लोकों के चराचर जिस अक्षर सूत्र से गुँथे हुए हैं, उस सिद्धमातृका को मैं प्रणाम करता हूँ। मनुष्य के ब्रह्मरन्ध्र से लेकर मूलाधार तक मेरुदण्ड में इक्यावन मातृकाऐं व्याप्त हैं। जैसे मूलाधार चक्र में 'सं षं शं वं', स्वाधिष्ठान में 'लं रं यं मं भं ब' मणिपुर में 'कं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं', अनाहत में 'ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं', आज्ञा में 'हं क्षं' और सहस्त्रार में 'ॐ से क्षं' तक बीस आवृत्ति

में एक हजार हजार दलों में विराजमान हैं। मूलाधार से सहस्रार तक कुण्डलिनी रूपिणी महादेवी के सूत्र में सभी मातृकाऐं गुँथी हुई हैं।

यदेकादशमाधारं बीजं कोणत्रयोद्भवम्।
ब्रह्माण्डादिकदाटाहान्तं जगदद्यापि दृश्यते।।६।।

मनुष्य शरीर के ग्यारह आधारों में जो व्याप्त रहती है, शरीर के त्रिकोण के तीनों कोनों में स्थित जो बीज विश्व के बीज है, जो इच्छा ज्ञान क्रिया रूपी त्रिकोण के रूप में विश्व का सृजन करती है, जो शिर से रीढ़ के निचले भाग तक मूलाधार के कन्द में व्याप्त रहती है, जो विश्व की उत्पत्ति का कारण है, उस देवी को नमस्कार है। इस श्लोक में सुषम्ना नाड़ी स्थित छः चक्र मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा के अतिरिक्त ग्यारह आधारों का वर्णन है। गोरक्ष संहिता में कहा गया है कि—

षटचक्र षोड़शाधारं द्विलक्ष्य व्योमपंचकम्।
स्वदेहेये न जानन्ति कथं सिद्धयन्ति योगिनः ।।

छः चक्र, सोलह आधार, दो लक्ष्य और पाँच आकाश चारों मिलाकर उन्तीस होते हैं। अपने शरीर में स्थित इन्हें न जानने वाला किस प्रकार सिद्धि प्राप्त कर सकता है? मूलाधार से आज्ञा तक के चक्रों का वर्णन ऊपर हो चुका है। अब सोलह आधारों को कहते हैं—१. पादांगुष्ठ, २. मूलाधार, ३. गुह्याधार, ४. वज्रगर्भनाड़ी, ५. उड्डीयानबन्ध आधार, ६. नाभिमण्डलाधार, ७. हृदयाधार, ८. कण्ठाधार, ९. कण्ठमूलाधार, १०. जिह्वामूलाधार, ११. जिह्वाअधोभागाधार, १२. उर्ध्वदन्तमूलाधार, १३. नासिकाग्राधार, १४. नासिकामूलाधार, १५. भ्रूमध्याधार, १६. नेत्राधार।

एक से लेकर बारह तक के श्लोकों को सर्वसिद्धिकृत कहा गया है। इनके कारण निम्नलिखित हैं—

१. पहले आधार पर धारणा ध्यान करने से दृष्टि की स्थिरता प्राप्त होती है।

२. दूसरे आधार को एँड़ियों में अचेतन करने से शरीरस्थ अग्नि की वृद्धि होती है।

३-४. तीसरे-चौथे आधार गुह्य में अश्विनी मुद्रा करने से अपान वायु चौथे आधार वज्रनाड़ी में घुसकर बिन्दुचक्र में जा पहुँचता है, इससे शुक्र स्तम्भन की सामर्थ्य प्राप्त होती है।

५. पाँचवें आधार में पश्चिमोत्तान आसन करने और गुदा संकोच का अभ्यास करने से मलमूत्र व्यवस्थित होते हैं। उदर के कृमि आदि नष्ट होते हैं।

६. छठे आधार में ॐ का जप और ज्योति ध्यान करने से नाद की उत्पत्ति होती है।

७. सातवें से प्राणवायु भरकर रोकने से हृदयकमल विकसित होता है।

८. आठवें में चिबुक को दृढ़तापूर्वक हृदय पर लगाकर ध्यान करने से इड़ा, पिङ्गला नाड़ियों में बहता हुआ वायु स्थिर हो जाता है।

९. नवें कण्ठमूल रूपी आधार में दो छोटी घंटिकाएँ लटकती हैं, वहाँ जीभ पहुँचाने से चन्द्रमण्डल से टपकते हुए सुधा रस का स्वाद चखा जाता है।

१०. दसवें में खेचरी मुद्रा की विधि से जीभ के अग्रभाग से मन्थन करने पर खेचरी की सिद्धि होती है।

११. ग्यारहवें में जीभ के अग्रभाग से मन्थन करने पर कवित्व शक्ति प्राप्त होती है।

१२. बारहवें में जीभ के अग्रभाग स्थिर करने का प्रयास किया जाता है। इससे अनेक रोग नष्ट होते हैं।

१३-१४. नासिकाग्र में दृष्टि स्थिर करने से ज्योति दर्शन होता है।

१५. भ्रूमध्याधार में दृष्टि स्थैर्य का अभ्यास करने से सूर्याकाश में चित्तलय की सिद्धि होती है।

१६. नेत्राधार मूल में अंगुली लगाने से इन्द्रधनुषी ज्योति दिखायी देती है। इससे ज्योति साक्षात्कार होता है।

इन १६ आधारों में मुख्य ११ आधार ही होते हैं। जैसे १. पैर, २. गुह्य, ३. वज्रगर्भनाड़ी, ४. नाभिमण्डल, ५. हृदय, ६. कण्ठ, ७. जीभ, ८. ऊर्ध्वदन्तमूल, ९. नाक, १०. भ्रूमध्य, ११. नेत्र। क्योंकि पैर से संवर्धित २ नाभि से २ जीभ से ३ और कंठ से २ हैं। इसलिये पैर को एक, नाभि को १, जीभ को १ और कण्ठ को एक मानने से १६ में से ५ घट जाते हैं। फलतः कुल ११ आधार ही रह जाते हैं।

अकचादिटतोन्नद्धपयशाक्षरवर्गिणीम्।

ज्येष्ठाङ्गबाहुहृत्पृष्ठकटिपादनिवासिनीम्।।७।।

जो अष्टवर्गरूपिणी है। संस्कृत अक्षर के देवनागरी लिपि में आट वर्ग में अक्षरों का संघट्ट है। जैसे—

में एक हजार हजार दलों में विराजमान हैं। मूलाधार से सहस्रार तक कुण्डलिनी रूपिणी महादेवी के सूत्र में सभी मातृकाऐं गुँथी हुई हैं।

यदेकादशमाधारं बीजं कोणत्रयोद्भवम्।
ब्रह्माण्डादिकदाटाहान्तं जगदद्यापि दृश्यते।।६।।

मनुष्य शरीर के ग्यारह आधारों में जो व्याप्त रहती है, शरीर के त्रिकोण के तीनों कोनों में स्थित जो बीज विश्व के बीज है, जो इच्छा ज्ञान क्रिया रूपी त्रिकोण के रूप में विश्व का सृजन करती है, जो शिर से रीढ़ के निचले भाग तक मूलाधार के कन्द में व्याप्त रहती है, जो विश्व की उत्पत्ति का कारण है, उस देवी को नमस्कार है। इस श्लोक में सुषम्ना नाड़ी स्थित छः चक्र मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा के अतिरिक्त ग्यारह आधारों का वर्णन है। गोरक्ष संहिता में कहा गया है कि—

षटचक्र षोड़शाधारं द्विलक्ष्य व्योमपंचकम्।
स्वदेहेये न जानन्ति कथं सिद्ध्यन्ति योगिनः ।।

छः चक्र, सोलह आधार, दो लक्ष्य और पाँच आकाश चारों मिलाकर उन्तीस होते हैं। अपने शरीर में स्थित इन्हें न जानने वाला किस प्रकार सिद्धि प्राप्त कर सकता है? मूलाधार से आज्ञा तक के चक्रों का वर्णन ऊपर हो चुका है। अब सोलह आधारों को कहते हैं—१. पादांगुष्ठ, २. मूलाधार, ३. गुह्याधार, ४. वज्रगर्भनाड़ी, ५. उड्डीयानबन्ध आधार, ६. नाभिमण्डलाधार, ७. हृदयाधार, ८. कण्ठाधार, ९. कण्ठमूलाधार, १०. जिह्वामूलाधार, ११. जिह्वाअधोभागाधार, १२. उर्ध्वदन्तमूलाधार, १३. नासिकाग्राधार, १४. नासिकामूलाधार, १५. भ्रूमध्याधार, १६. नेत्राधार।

एक से लेकर बारह तक के श्लोकों को सर्वसिद्धिकृत कहा गया है। इनके कारण निम्नलिखित हैं—

१. पहले आधार पर धारणा ध्यान करने से दृष्टि की स्थिरता प्राप्त होती है।

२. दूसरे आधार को एँड़ियों में अचेतन करने से शरीरस्थ अग्नि की वृद्धि होती है।

३-४. तीसरे-चौथे आधार गुह्य में अश्विनी मुद्रा करने से अपान वायु चौथे आधार वज्रनाड़ी में घुसकर बिन्दुचक्र में जा पहुँचता है, इससे शुक्र स्तम्भन की सामर्थ्य प्राप्त होती है।

५. पाँचवें आधार में पश्चिमोत्तान आसन करने और गुदा संकोच का अभ्यास करने से मलमूत्र व्यवस्थित होते हैं। उदर के कृमि आदि नष्ट होते हैं।

६. छठे आधार में ॐ का जप और ज्योति ध्यान करने से नाद की उत्पत्ति होती है।

७. सातवें से प्राणवायु भरकर रोकने से हृदयकमल विकसित होता है।

८. आठवें में चिबुक को दृढ़तापूर्वक हृदय पर लगाकर ध्यान करने से इड़ा, पिङ्गला नाड़ियों में बहता हुआ वायु स्थिर हो जाता है।

९. नवें कण्ठमूल रूपी आधार में दो छोटी घंटिकाएँ लटकती हैं, वहाँ जीभ पहुँचाने से चन्द्रमण्डल से टपकते हुए सुधा रस का स्वाद चखा जाता है।

१०. दसवें में खेचरी मुद्रा की विधि से जीभ के अग्रभाग से मन्थन करने पर खेचरी की सिद्धि होती है।

११. ग्यारहवें में जीभ के अग्रभाग से मन्थन करने पर कवित्व शक्ति प्राप्त होती है।

१२. बारहवें में जीभ के अग्रभाग स्थिर करने का प्रयास किया जाता है। इससे अनेक रोग नष्ट होते हैं।

१३-१४. नासिकाग्र में दृष्टि स्थिर करने से ज्योति दर्शन होता है।

१५. भ्रूमध्याधार में दृष्टि स्थैर्य का अभ्यास करने से सूर्याकाश में चित्तलय की सिद्धि होती है।

१६. नेत्राधार मूल में अंगुली लगाने से इन्द्रधनुषी ज्योति दिखायी देती है। इससे ज्योति साक्षात्कार होता है।

इन १६ आधारों में मुख्य ११ आधार ही होते हैं। जैसे १. पैर, २. गुह्य, ३. वज्रगर्भनाड़ी, ४. नाभिमण्डल, ५. हृदय, ६. कण्ठ, ७. जीभ, ८. ऊर्ध्वदन्तमूल, ९. नाक, १०. भ्रूमध्य, ११. नेत्र। क्योंकि पैर से संवर्धित २ नाभि से २ जीभ से ३ और कंठ से २ हैं। इसलिये पैर को एक, नाभि को १, जीभ को १ और कण्ठ को एक मानने से १६ में से ५ घट जाते हैं। फलतः कुल ११ आधार ही रह जाते हैं।

अकचादिटतोन्नद्धपयशाक्षरवर्गिणीम्।
ज्येष्ठाङ्गबाहुहृत्पृष्ठकटिपादनिवासिनीम्॥७॥

जो अष्टवर्गरूपिणी है। संस्कृत अक्षर के देवनागरी लिपि में आट वर्ग में अक्षरों का संघट्ट है। जैसे—

१. अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः सोलह अक्षर अवर्ग में हैं।

२. कवर्ग में क ख ग घ ङ पाँच अक्षर हैं।

३. चवर्ग में च छ ज झ ञ पाँच अक्षर हैं।

४. टवर्ग में ट ठ ड ढ ण पाँच अक्षर हैं।

५. तवर्ग में त थ द ध न पाँच अक्षर हैं।

६. पवर्ग में प फ ब भ म पाँच अक्षर हैं।

७. यवर्ग में य र ल व चार अक्षर हैं।

८. शवर्ग में श ष स ह ल क्ष छः अक्षर हैं।

देवनागरी लिपि में कुल ५१ अक्षर हैं। इन पर बिन्दु देने से ये मातृकाएँ कहलाती हैं, जो देवी स्वरूपा है।

ज्येष्ठाङ्ग में शिर, शिखा, ललाट, भ्रूमध्य आते हैं। बाहुमूल, हृदय, पीठ, कमर, पैरों में माता शक्ति रहती हैं। इस रूप की देवी को नमस्कार है।

तामीकाराक्षरोद्धार साराधारां परात्पराम्।
प्रणमामि महादेवीं परमानन्दरूपिणीम्।।८।।

आधारों का सार परात्परा 'ई' अक्षर का उद्धार करने वाली परम आनन्द में रहने वाली और परमानन्द देने वाली देवी को नमस्कार है।

अद्यापि यस्या जानन्ति न मनागपि देवताः।
केयं कस्मात्क्व केनेति सरूपारूपभावनाम्।।९।।

जिस आदि शक्ति देवी को अन्य देवी-देवता आज भी नहीं जान पाये कि वह किस तत्त्व से रूपवान और अरूपवान का साकार और निराकर का निर्माण करती है, उसे प्रणाम है।

वन्दे तामहमक्षय्यक्षकाराक्षररूपिणीम्।
देवीं कुलकलोल्लोलप्रोल्लसन्तीं परौलिजाम्।।१०।।

मैं उस महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जो अ से क्ष तक के अक्षरों में व्याप्त रहती हैं और स्वयं क्षकाररूपिणी हैं, जो परम पावन हैं, जगत विस्तार का दर्पण है, जो शिव से लेकर क्षिति तक के छत्तीस तत्त्वों के स्वरूपा हैं, उन्हें प्रणाम करते हैं। 'शिवादि क्षिति प्राप्त' ३६ तत्त्व ये हैं—१. शिव, २. शक्ति, ३. सदाशिव, ४. ईश्वर, ५. शुद्धविद्या, ५. माया, ७. कला, ८. विद्या,

९. राग, १०. काल, ११. नियति, १२. पुरुष, १३. प्रकृति, १४. बुद्धि, १५. अहंकार, १६ मन, १७ श्रोत्र, १८. त्वक्, १९ चक्षु, २०. जिह्वा, २१ घ्राण, २२. वाक्, २३. पाणि, २४. पाद, २५. पायु, २६. उपस्थ, २७. शब्द, २८. स्पर्श, २९. रूप, ३०. रस, ३१. गन्ध, ३२. आकाश, ३३. वायु, ३४. वह्नि, ३५. जल, ३६. भूमि। संसार रूपी सागर में लहरियों के रूप में ये कलाएँ कल्लोल करती हैं।

वर्गानुक्रमयोगेन यस्या मात्रष्टकं स्थितम्।
वन्दे तामष्टवर्गोत्थमहासिद्ध्यष्टकेश्वरीम्।।११।।

मैं उस महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जो देवनागरी संस्कृत के ५१ अक्षरों के अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग और शवर्ग कुल आठ वर्गों में व्याप्त रहती हैं। अष्टवर्ग से प्राप्त आठ सिद्धियों के स्वरूपा महादेवी को नमस्कार है।

कामपूर्णजकाराख्यश्रीपीठान्तर्निवासिनीम्।
चतुराज्ञाकोशभूतां नौमि श्रीत्रिपुरामहम्।।१२।।

मैं उस महात्रिपुरसुन्दरी देवी को प्रणाम करता हूँ, जो कामरूप, पूर्णगिरि और जालन्धर पीठ में विद्यमान रहती हैं और जो तत्त्वों के चारों प्रकारों में व्याप्त रहती हैं।

भगवन्सर्वमन्त्राश्च भवता मे प्रकाशिताः।
चतुष्षष्टिस्तु तन्त्राणि मातृणामुत्तमानि तु।।१३।।
महामाया शम्बरं च योगिनी जालशम्बरम्।
तत्त्वशम्बरकं देव भैरवाष्टकमेव च।।१४।।
बहुरूपाष्टकं ज्ञानं यामलाष्टकमेव च।
चन्द्रज्ञानं वासुकिं च महासम्मोहनं तथा।।१५।।
महोच्छुष्मं महादेव वाथुलं च नयोत्तरम्।
हृद्भेदं मातृभेदं च गुह्यतन्त्रं च कामिकम्।।१६।।
कलापादं कालसारं तथाऽन्यत्कुब्जिकामतम्।
नयोत्तरं च वीणाद्यं त्रोतुलं भ्रोतुलोत्तरम्।।१७।।
पञ्चामृतं रूपभेदं भूतोड्डामरमेव च।
कुलसारं कुलोड्डीशं कुलचूडामणिं तथा।।१८।।

१. अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः सोलह अक्षर अवर्ग में हैं।

२. कवर्ग में क ख ग घ ङ पाँच अक्षर हैं।

३. चवर्ग में च छ ज झ ञ पाँच अक्षर हैं।

४. टवर्ग में ट ठ ड ढ ण पाँच अक्षर हैं।

५. तवर्ग में त थ द ध न पाँच अक्षर हैं।

६. पवर्ग में प फ ब भ म पाँच अक्षर हैं।

७. यवर्ग में य र ल व चार अक्षर हैं।

८. शवर्ग में श ष स ह ल क्ष छः अक्षर हैं।

देवनागरी लिपि में कुल ५१ अक्षर हैं। इन पर बिन्दु देने से ये मातृकाएँ कहलाती हैं, जो देवी स्वरूपा है।

ज्येष्ठाङ्ग में शिर, शिखा, ललाट, भ्रूमध्य आते हैं। बाहुमूल, हृदय, पीठ, कमर, पैरों में माता शक्ति रहती हैं। इस रूप की देवी को नमस्कार है।

तामीकाराक्षरोद्धार साराधारां परात्पराम्।
प्रणमामि महादेवीं परमानन्दरूपिणीम्।।८।।

आधारों का सार परात्परा 'ई' अक्षर का उद्धार करने वाली परम आनन्द में रहने वाली और परमानन्द देने वाली देवी को नमस्कार है।

अद्यापि यस्या जानन्ति न मनागपि देवताः।
केयं कस्मात्क्व केनेति सरूपारूपभावनाम्।।९।।

जिस आदि शक्ति देवी को अन्य देवी-देवता आज भी नहीं जान पाये कि वह किस तत्त्व से रूपवान और अरूपवान का साकार और निराकर का निर्माण करती है, उसे प्रणाम है।

वन्दे तामहमक्षय्यक्षकाराक्षररूपिणीम्।
देवीं कुलकलोल्लोलप्रोल्लसन्तीं परौलिजाम्।।१०।।

मैं उस महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जो अ से क्ष तक के अक्षरों में व्याप्त रहती हैं और स्वयं क्षकाररूपिणी हैं, जो परम पावन हैं, जगत विस्तार का दर्पण है, जो शिव से लेकर क्षिति तक के छत्तीस तत्त्वों के स्वरूपा हैं, उन्हें प्रणाम करते हैं। 'शिवादि क्षिति प्राप्त' ३६ तत्त्व ये हैं—१. शिव, २. शक्ति, ३. सदाशिव, ४. ईश्वर, ५. शुद्धविद्या, ५. माया, ७. कला, ८. विद्या,

९. राग, १०. काल, ११. नियति, १२. पुरुष, १३. प्रकृति, १४. बुद्धि, १५. अहंकार, १६ मन, १७ श्रोत्र, १८. त्वक्, १९ चक्षु, २०. जिह्वा, २१ घ्राण, २२. वाक्, २३. पाणि, २४. पाद, २५. पायु, २६. उपस्थ, २७. शब्द, २८. स्पर्श, २९. रूप, ३०. रस, ३१. गन्ध, ३२. आकाश, ३३. वायु, ३४. वह्नि, ३५. जल, ३६. भूमि। संसार रूपी सागर में लहरियों के रूप में ये कलाएँ कल्लोल करती हैं।

वर्गानुक्रमयोगेन यस्या मात्रष्टकं स्थितम्।
वन्दे तामष्टवर्गोत्थमहासिद्ध्यष्टकेश्वरीम्।।११।।

मैं उस महादेवी को प्रणाम करता हूँ, जो देवनागरी संस्कृत के ५१ अक्षरों के अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग और शवर्ग कुल आठ वर्गों में व्याप्त रहती हैं। अष्टवर्ग से प्राप्त आठ सिद्धियों के स्वरूपा महादेवी को नमस्कार है।

कामपूर्णजकाराख्यश्रीपीठान्तर्निवासिनीम्।
चतुराज्ञाकोशभूतां नौमि श्रीत्रिपुरामहम्।।१२।।

मैं उस महात्रिपुरसुन्दरी देवी को प्रणाम करता हूँ, जो कामरूप, पूर्णगिरि और जालन्धर पीठ में विद्यमान रहती हैं और जो तत्त्वों के चारों प्रकारों में व्याप्त रहती हैं।

भगवन्सर्वमन्त्राश्च भवता मे प्रकाशिताः।
चतुष्षष्टिस्तु तन्त्राणि मातृणामुत्तमानि तु।।१३।।
महामाया शम्बरं च योगिनी जालशम्बरम्।
तत्त्वशम्बरकं देव भैरवाष्टकमेव च।।१४।।
बहुरूपाष्टकं ज्ञानं यामलाष्टकमेव च।
चन्द्रज्ञानं वासुकिं च महासम्मोहनं तथा।।१५।।
महोच्छुष्मं महादेव वाथुलं च नयोत्तरम्।
हृद्भेदं मातृभेदं च गुह्यतन्त्रं च कामिकम्।।१६।।
कलापादं कालसारं तथाऽन्यत्कुब्जिकामतम्।
नयोत्तरं च वीणाद्यं त्रोतुलं भ्रोतुलोत्तरम्।।१७।।
पञ्चामृतं रूपभेदं भूतोड्डामरमेव च।
कुलसारं कुलोड्डीशं कुलचूडामणिं तथा।।१८।।

सर्वज्ञानोत्तरं देव महापिचुमतं तथा।
महालक्ष्मीमतं देवी सिद्धयोगीश्वरीमतम्।।१९।।
करूपिकामतं देवरूपिकामतमेव च।
सर्ववीरमतं देव विमलामतमेवच।।२०।।
अरुणेशं मोदनेशं विशुद्धेश्वरमेव च।
एवमेतानि शास्त्राणि तथाऽन्यान्यपि कोटिशः।।२१।।
भवतोक्तानि मे देव सर्वज्ञानमयानि च।
विद्याः षोडश देवेश सूचिता न प्रकाशिताः।।२२।।

पार्वती जी ने श्री शिव जी से कहा कि भगवन आपने सभी मन्त्रों को प्रकाशित किया। चौंसठ तन्त्रों और उत्तम मातृकाओं का वर्णन किया है। ये चौंसठ तन्त्र निम्नांकित हैं—

१. महामाया, २. शम्बर, ३. योगिनी, ४. जालशम्बर, ५. तत्त्वशम्बर, ६. भैरवाष्टक (इसमें आठ तन्त्र हैं), ७. बहुरूपाष्टक, ८. ज्ञानयामलाष्टक, ९. चन्द्रज्ञान, १०. वाषुकि, ११. महासम्मोहन, १२. महोच्छुष्म, १३. महादेव, १४. वाथुल, १५. नयोत्तर, १६. हृद्‌भेद, १७. मातृभेद, १८. गुह्यतन्त्र, १९. कामिक, २०. कलापाद, २१. कालसार, २२. कुब्जिकामतम्, २३. नयोत्तर, २४. वीणाद्य, २५. त्रोतुल, २६. प्रोतुलोत्तर, २७. पंचामृत, २८. रूपभेद, २९. भूतोड्डामर, ३०. कुलसार, ३१. कुलोड्डीश, ३२. कुलचूड़ामणि, ३३. सर्वज्ञानोत्तर, ३४. महापिचुमत, ३५. महालक्ष्मीमत, ३६. सिद्धयोगीश्वरीमत, ३७. करूपिकामत, ३८. देवरूपिकामत, ३९. सर्ववीरमत, ४०. विमलामत, ४१. अरुणेश, ४२. मोदनेश, ४३. विशुद्धेश्वर। भैरवाष्टक में से ७, बहुरूपाष्टक में से ७ और यामलाष्टक में से ७ कुल ७ + ७ + ७ = २१ को ४३ में जोड़ने से ६४ तन्त्र होते हैं। भैरवाष्टक के आठ तन्त्र स्वच्छन्द, क्रोध, उन्मत्त, उग्र, कपाली, झंकार, शेखर, विजय हैं। बहुरूपाष्टक में आठ शक्ति तन्त्र हैं, जिनके नाम ब्राह्मीतन्त्र, माहेश्वरीतन्त्र, कौमारीतन्त्र, वैष्णवीतन्त्र, वाराहीतन्त्र, माहेन्द्रीतन्त्र, चामुण्डातन्त्र और शिवदूतीतन्त्र है। यामलाष्टक में ब्रह्मयामल, विष्णुयामल, रुद्रयामल, लक्ष्मीयामल, उमयामल, स्कन्दयामल, जयद्रथयामल और गणेश-यामल है।

इन शास्त्रों के अतिरिक्त अन्य करोड़ों शास्त्रों का वर्णन आपने किया। सभी ज्ञानमय देवों का वर्णन आपने किया; परन्तु देवेश आपने सोलह विद्याओं के बारे में न सूचित किया और न प्रकाशित किया।

इदानीं श्रोतुमिच्छामि तासां नामानि शङ्कर।
एकैकं चक्रपूजां च परिपूर्णां समन्ततः।।२३।।
अनेकदेवतानाममन्त्रमुद्रागणैः सह।
शृणु देवि महाज्ञानं नित्याषोडशिकार्णवम्।।२४।।

हे शंकरजी! अब मैं उनके नाम प्रत्येक की चक्रपूजा और सभी प्रकार से परिपूर्ण उनके वर्णन सुनना चाहती हूँ। उनके देवता के नाम, मन्त्र और मुद्राओं के साथ मुझसे कहिये। शंकर जी ने कहा कि देवी नित्याषोडशिकार्णव के महाज्ञान को कहता हूँ, सुनिये।

न कस्यचिन्मयाऽऽख्यातं सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
तत्राऽऽदौ प्रथमा नित्या महात्रिपुरसुन्दरी।।२५।।
ततः कामेश्वरी नित्या नित्या च भगमालिनी।
नित्यक्लिन्नापि हि तथा भेरुण्डा वह्निवासिनी।।२६।।
महाविद्येश्वरी दूती त्वरिता कुलसुन्दरी।
नित्या नीलपताका च विजया सर्वमङ्गला।।२७।।
ज्वालामालि विचित्रा चेत्येवं नित्यास्तु षोडश।

सोलह नित्याओं का महाज्ञान अब तक मैंने किसी को नहीं बतलाया है। यह सभी तन्त्रों में गोपित है। इन सोलह नित्याओं में पहली नित्या महात्रिपुरसुन्दरी है। इसके बाद दूसरी नित्या का नाम कामेश्वरी है। तीसरी नित्या भगमालिनी है। चौथी नित्या नित्यक्लिन्ना है। पाँचवीं भेरुण्डा और छठी वह्निवासिनी है। सावतीं महाविद्येश्वरी और आठवीं शिवदूती, नवीं त्वरिता, दसवीं कुलसुन्दरी, ग्यारहवीं नित्या, बारहवीं नीलपताका, तेरहवीं विजया, चौदहवीं सर्वमंगला, पन्द्रहवीं ज्वालामालि और सोलहवीं विचित्रा है। कुल मिलाकर नित्याओं की संख्या सोलह है।

शृणु देवि महानित्यामादौ त्रिपुरसुन्दरीम्।।२८।।
यया विज्ञातया देवि जगत्क्षोभः प्रजायते।

देवी! सुनिये पहले मैं महानित्या त्रिपुरसुन्दरी के बारे में कहता हूँ। इस देवी को जो जानता है, वह सारे संसार को क्षुब्ध कर सकता है।

शक्त्या शक्तिं विनिर्भिद्य भूयो वह्निपुरेण तु।।२९।।
सम्पुटीकृत्य सर्वोर्ध्वं शक्तिं विस्तारयेदधः।
तथैव वह्निचक्रेण तामेवोर्ध्वं विभेदयेत्।।३०।।

सर्वज्ञानोत्तरं देव महापिचुमतं तथा।
महालक्ष्मीमतं देवी सिद्धयोगीश्वरीमतम्।।१९।।
करूपिकामतं देवरूपिकामतमेव च।
सर्ववीरमतं देव विमलामतमेवच।।२०।।
अरुणेशं मोदनेशं विशुद्धेश्वरमेव च।
एवमेतानि शास्त्राणि तथाऽन्यान्यपि कोटिशः।।२१।।
भवतोक्तानि मे देव सर्वज्ञानमयानि च।
विद्याः षोडश देवेश सूचिता न प्रकाशिताः।।२२।।

पार्वती जी ने श्री शिव जी से कहा कि भगवन आपने सभी मन्त्रों को प्रकाशित किया। चौंसठ तन्त्रों और उत्तम मातृकाओं का वर्णन किया है। ये चौंसठ तन्त्र निम्नांकित हैं—

१. महामाया, २. शम्बर, ३. योगिनी, ४. जालशम्बर, ५. तत्त्वशम्बर, ६. भैरवाष्टक (इसमें आठ तन्त्र हैं), ७. बहुरूपाष्टक, ८. ज्ञानयामलाष्टक, ९. चन्द्रज्ञान, १०. वाषुकि, ११. महासम्मोहन, १२. महोच्छुष्म, १३. महादेव, १४. वाथुल, १५. नयोत्तर, १६. हृद्भेद, १७. मातृभेद, १८. गुह्यतन्त्र, १९. कामिक, २०. कलापाद, २१. कालसार, २२. कुब्जिकामतम्, २३. नयोत्तर, २४. वीणाद्य, २५. त्रोतुल, २६. प्रोतुलोत्तर, २७. पंचामृत, २८. रूपभेद, २९. भूतोड्डामर, ३०. कुलसार, ३१. कुलोड्डीश, ३२. कुलचूड़ामणि, ३३. सर्वज्ञानोत्तर, ३४. महापिचुमत, ३५. महालक्ष्मीमत, ३६. सिद्धयोगीश्वरीमत, ३७. करूपिकामत, ३८. देवरूपिकामत, ३९. सर्ववीरमत, ४०. विमलामत, ४१. अरुणेश, ४२. मोदनेश, ४३. विशुद्धेश्वर। भैरवाष्टक में से ७, बहुरूपाष्टक में से ७ और यामलाष्टक में से ७ कुल ७ + ७ + ७ = २१ को ४३ में जोड़ने से ६४ तन्त्र होते हैं। भैरवाष्टक के आठ तन्त्र स्वच्छन्द, क्रोध, उन्मत्त, उग्र, कपाली, झंकार, शेखर, विजय हैं। बहुरूपाष्टक में आठ शक्ति तन्त्र हैं, जिनके नाम ब्राह्मीतन्त्र, माहेश्वरीतन्त्र, कौमारीतन्त्र, वैष्णवीतन्त्र, वाराहीतन्त्र, माहेन्द्रीतन्त्र, चामुण्डातन्त्र और शिवदूतीतन्त्र है। यामलाष्टक में ब्रह्मयामल, विष्णुयामल, रुद्रयामल, लक्ष्मीयामल, उमयामल, स्कन्दयामल, जयद्रथयामल और गणेश-यामल है।

इन शास्त्रों के अतिरिक्त अन्य करोड़ों शास्त्रों का वर्णन आपने किया। सभी ज्ञानमय देवों का वर्णन आपने किया; परन्तु देवेश आपने सोलह विद्याओं के बारे में न सूचित किया और न प्रकाशित किया।

इदानीं श्रोतुमिच्छामि तासां नामानि शङ्कर।
एकैकं चक्रपूजां च परिपूर्णां समन्तत:।।२३।।
अनेकदेवतानाममन्त्रमुद्रागणै: सह।
श्रृणु देवि महाज्ञानं नित्याषोडशिकार्णवम्।।२४।।

हे शंकरजी! अब मैं उनके नाम प्रत्येक की चक्रपूजा और सभी प्रकार से परिपूर्ण उनके वर्णन सुनना चाहती हूँ। उनके देवता के नाम, मन्त्र और मुद्राओं के साथ मुझसे कहिये। शंकर जी ने कहा कि देवी नित्याषोडशिकार्णव के महाज्ञान को कहता हूँ, सुनिये।

न कस्यचिन्मयाऽऽख्यातं सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
तत्राऽऽदौ प्रथमा नित्या महात्रिपुरसुन्दरी।।२५।।
तत: कामेश्वरी नित्या नित्या च भगमालिनी।
नित्यक्लिन्नापि हि तथा भेरुण्डा वह्निवासिनी।।२६।।
महाविद्येश्वरी दूती त्वरिता कुलसुन्दरी।
नित्या नीलपताका च विजया सर्वमङ्गला।।२७।।
ज्वालामालि विचित्रा चेत्येवं नित्यास्तु षोडश।

सोलह नित्याओं का महाज्ञान अब तक मैंने किसी को नहीं बतलाया है। यह सभी तन्त्रों में गोपित है। इन सोलह नित्याओं में पहली नित्या महात्रिपुरसुन्दरी है। इसके बाद दूसरी नित्या का नाम कामेश्वरी है। तीसरी नित्या भगमालिनी है। चौथी नित्या नित्यक्लिन्ना है। पाँचवीं भेरुण्डा और छठी वह्निवासिनी है। सावतीं महाविद्येश्वरी और आठवीं शिवदूती, नवीं त्वरिता, दसवीं कुलसुन्दरी, ग्यारहवीं नित्या, बारहवीं नीलपताका, तेरहवीं विजया, चौदहवीं सर्वमंगला, पन्द्रहवीं ज्वालामालि और सोलहवीं विचित्रा है। कुल मिलाकर नित्याओं की संख्या सोलह है।

श्रृणु देवि महानित्यामादौ त्रिपुरसुन्दरीम्।।२८।।
यया विज्ञातया देवि जगत्क्षोभ: प्रजायते।

देवी! सुनिये पहले मैं महानित्या त्रिपुरसुन्दरी के बारे में कहता हूँ। इस देवी को जो जानता है, वह सारे संसार को क्षुब्ध कर सकता है।

शक्त्या शक्तिं विनिर्भिद्य भूयो वह्निपुरेण तु।।२९।।
सम्पुटीकृत्य सर्वोर्ध्व शक्तिं विस्तारयेदध:।
तथैव वह्निचक्रेण तामेवोर्ध्वं विभेदयेत्।।३०।।

तत ऊर्ध्वस्थितां शक्तिमूर्ध्वं विस्तारयेत्क्रमात्।
पुनराद्यं वह्निचक्रमधो विस्तार्य सुन्दरि।।३१।।
ग्रन्थिभेदक्रमेणैव शक्तिमाद्यां विभेदयेत्।
तथा सर्वोर्ध्ववह्न्यन्तःशक्तिं विस्तारयेदधः।।३२।।
तामादिचक्राध शक्त्या वह्निनाध्र्वं विभेदयेत्।
पुनः पूर्ववदेवाऽऽद्यां शक्तिं विस्तार्य भेदयेत्।।३३।।
ऊर्ध्ववह्निमधोवह्निमध्येवह्निविवर्जितम्।
विस्तार्य भेदयेच्छक्तिमधस्तादूर्ध्ववह्निना।।३४।।
अतो मध्यादिशक्त्यूर्ध्वशक्तिं विस्तारयेदशः।
तथैव सम्पुटीकुर्यात्सर्वचक्रं सुरेश्वरि।।३५।।
तां च तेन महेशानि वह्निचक्रेण भेदयेत्।
ग्रन्थिभेदक्रमेणाधः सर्वोर्ध्वात्सर्वबाह्यतः।।३६।।
मध्योर्ध्वशक्तिपर्यन्तमादिशक्त्यवधि प्रिये।
ततो बाह्यस्थशक्त्यन्तःशक्तिमूर्ध्वं विकासयेत्।।३७।।
सर्वोर्ध्ववह्न्यधोवह्निपर्यन्तं वीरवन्दिते।
तथा विस्तारयेच्छक्तिमाद्यामप्यूर्ध्वमीश्वरि।।३८।।
तथा विभेदयेद्वह्निचक्रं सर्वोर्ध्वसंस्थितम्।
सर्वोर्ध्ववह्न्यधोभागग्रन्थिपर्यन्ततः प्रिये।।३९।।
विस्तार्य वाह्यशक्तिं तु सर्वाधस्ताद्विभेदयेत्।
ततः सृष्ट्या महाचक्रं प्रथमं तु हुताशनम्।।४०।।

इन श्लोकों में श्रीचक्र निर्माण की विधि बतलायी गयी है। यह विधि क्लिष्ट है। अतः श्रीचक्र बनाने की सरल विधि दी जाती है।

साधक पूर्व मुख बैठे तो साधक के सम्मुख पूर्व दिशा होती है। सर्वप्रथम अधोमुख शक्ति त्रिकोण बनायें। इसके लिये आठों दिशाओं में कल्पित वृत्त में बिन्दु लगावें। वृत्त बिन्दु से ऊपर ५ अंश पर और नीचे ५ अंश पर ईशान से आग्नेय तक और वायव्य से नैर्ऋत्य तक यन्त्र के आयाम के अनुसार छोटी या लम्बी एक-एक तिर्यक रेखा खीचें।

वायव्य से नैत्रऋत्य तक जाने वाली रेखा के बीच में एक बिन्दु देकर उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ एक ईशान की ओर और एक आग्नेय की ओर खीचें और ईशान में आग्नेय जाने वाली रेखा से मिला दें। इससे अधोमुख शक्ति त्रिकोण बन गया। जैसे निम्नांकित चित्र १।

चित्र १

इसके बाद ईशान से आग्नेय तक जाने वाली तिर्यक रेखा के मध्य भाग से ३ अंश ऊपर एक बिन्दु देकर उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ एक वायव्य की ओर और दूसरी नैर्ऋत्य की ओर खीचें। वायव्य से नैर्ऋत्य तक खीची हुई तिर्यक रेखा से मिला दें। यह ऊर्ध्वमुख शिव त्रिकोण बन गया। जैसा निम्नांकित चित्र २ है।

चित्र २

इसके बाद उत्तर से दक्षिण तक एक तिर्यक रेखा ऊपर और नीचे दोनों त्रिकोणों के मध्य की सन्धियों को भेदन करते हुए खीचें। वायव्य से नैर्ऋत्य तक खींची रेखा के मध्य भाग के तीन अंश नीचे एक बिन्दु बनायें। उस बिन्दु से दो पार्श्व ईशान आग्नेय की ओर रेखाएँ खींचकर उत्तर दक्षिण वाली उक्त तिर्यक रेखा के छोरों से मिला दें। इससे दूसरा शक्ति त्रिकोण बन जाता है। जैसे निम्नांकित चित्र ३ है।

चित्र ३ के मध्य में जो अधोमुख त्रिकोण है, वही महात्र्यस्त्र चक्र है। उस मध्यस्थ त्रिकोण के मध्य में एक बिन्दु बना देने से वही बिन्दु चक्र बनता है। इस प्रकार चित्रांक ३ तक बिन्दु चक्र, महात्र्यस्त्र चक्र और अष्टार चक्र बन जाते हैं। इसमें जो नौ त्रिकोण हैं, उन्हें ही नवयोनि चक्र अर्थात् नव त्रिकोण चक्र कहते हैं। यहाँ योनि का अर्थ त्रिकोण है।

तत ऊर्ध्वस्थितां शक्तिमूर्ध्वं विस्तारयेत्क्रमात्।
पुनराद्यं वह्निचक्रमधो विस्तार्य सुन्दरि।।३१।।
ग्रन्थिभेदक्रमेणैव शक्तिमाद्यां विभेदयेत्।
तथा सर्वोर्ध्ववह्न्यन्तःशक्तिं विस्तारयेदधः।।३२।।
तामादिचक्राध शक्त्या वह्निनार्ध्वं विभेदयेत्।
पुनः पूर्ववदेवाऽऽद्यां शक्तिं विस्तार्य भेदयेत्।।३३।।
ऊर्ध्ववह्निमधोवह्निमध्येवह्निविवर्जितम्।
विस्तार्य भेदयेच्छक्तिमधस्तादूर्ध्वह्निना।।३४।।
अतो मध्यादिशक्त्यूर्ध्वशक्तिं विस्तारयेदशः।
तथैव सम्पुटीकुर्यात्सर्वचक्रं सुरेश्वरि।।३५।।
तां च तेन महेशानि वह्निचक्रेण भेदयेत्।
ग्रन्थिभेदक्रमेणाधः सर्वोध्वात्सर्वबाह्यतः।।३६।।
मध्योर्ध्वशक्तिपर्यन्तमादिशक्त्यवधि प्रिये।
ततो बाह्यस्थशक्त्यन्तःशक्तिमूर्ध्वं विकासयेत्।।३७।।
सर्वोर्ध्ववह्न्यधोवह्निपर्यन्तं वीरवन्दिते।
तथा विस्तारयेच्छक्तिमाद्यामप्यूर्ध्वमीश्वरि।।३८।।
तथा विभेदयेद्वह्निचक्रं सर्वोर्ध्वसंस्थितम्।
सर्वोर्ध्ववह्न्यधोभागग्रन्थिपर्यन्ततः प्रिये।।३९।।
विस्तार्य वाह्यशक्तिं तु सर्वाधस्ताद्विभेदयेत्।
ततः सृष्ट्या महाचक्रं प्रथमं तु हुताशनम्।।४०।।

इन श्लोकों में श्रीचक्र निर्माण की विधि बतलायी गयी है। यह विधि क्लिष्ट है। अतः श्रीचक्र बनाने की सरल विधि दी जाती है।

साधक पूर्व मुख बैठे तो साधक के सम्मुख पूर्व दिशा होती है। सर्वप्रथम अधोमुख शक्ति त्रिकोण बनायें। इसके लिये आठों दिशाओं में कल्पित वृत्त में बिन्दु लगावें। वृत्त बिन्दु से ऊपर ५ अंश पर और नीचे ५ अंश पर ईशान से आग्नेय तक और वायव्य से नैर्ऋत्य तक यन्त्र के आयाम के अनुसार छोटी या लम्बी एक-एक तिर्यक रेखा खीचें।

वायव्य से नैत्रृत्य तक जाने वाली रेखा के बीच में एक बिन्दु देकर उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ एक ईशान की ओर और एक आग्नेय की ओर खीचें और ईशान में आग्नेय जाने वाली रेखा से मिला दें। इससे अधोमुख शक्ति त्रिकोण बन गया। जैसे निम्नांकित चित्र १।

चित्र १

इसके बाद ईशान से आग्नेय तक जाने वाली तिर्यक रेखा के मध्य भाग से ३ अंश ऊपर एक बिन्दु देकर उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ एक वायव्य की ओर और दूसरी नैर्ऋत्य की ओर खीचें। वायव्य से नैर्ऋत्य तक खीची हुई तिर्यक रेखा से मिला दें। यह ऊर्ध्वमुख शिव त्रिकोण बन गया। जैसा निम्नांकित चित्र २ है।

चित्र २

इसके बाद उत्तर से दक्षिण तक एक तिर्यक रेखा ऊपर और नीचे दोनों त्रिकोणों के मध्य की सन्धियों को भेदन करते हुए खीचें। वायव्य से नैर्ऋत्य तक खींची रेखा के मध्य भाग के तीन अंश नीचे एक बिन्दु बनायें। उस बिन्दु से दो पार्श्व ईशान आग्नेय की ओर रेखाएँ खींचकर उत्तर दक्षिण वाली उक्त तिर्यक रेखा के छोरों से मिला दें। इससे दूसरा शक्ति त्रिकोण बन जाता है। जैसे निम्नांकित चित्र ३ है।

चित्र ३ के मध्य में जो अधोमुख त्रिकोण है, वही महात्र्यस्र चक्र है। उस मध्यस्थ त्रिकोण के मध्य में एक बिन्दु बना देने से वही बिन्दु चक्र बनता है। इस प्रकार चित्रांक ३ तक बिन्दु चक्र, महात्र्यस्र चक्र और अष्टार चक्र बन जाते हैं। इसमें जो नौ त्रिकोण हैं, उन्हें ही नवयोनि चक्र अर्थात् नव त्रिकोण चक्र कहते हैं। यहाँ योनि का अर्थ त्रिकोण है।

चित्र ३

अष्टार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के तीन अंश नीचे सीधान पर एक बिन्दु बनाकर उससे दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर वायव्य और नैर्ऋत्य के दोनों त्रिकोणों को कोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। ईशान और आग्नेय की ओर दूसरे शक्ति त्रिकोण की जो तिर्यक रेखा है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर इन दोनों रेखाओं को मिला दें।

इसके बाद दूसरे शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को ईशान आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ायें। प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा ईशान से आग्नेय तक खींचे। उक्त बढ़ी हुई दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसी प्रकार प्रथम शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ावें। प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा वायव्य से नैर्ऋत्य तक खींचकर उक्त दोनों बढ़ी पार्श्व रेखाओं से मिला दें। इस प्रकार अन्तर्दशार चक्र बन जाता है। जैसा चित्रांक ४ निम्नांकित है।

चित्र ४

इस अन्तर्दशार चक्र में तीन शक्ति त्रिकोण और दो ऊर्ध्व मुख शिव त्रिकोण हैं। चारों ओर छोटे-छोटे दश त्रिकोण हैं।

इस अन्तर्दशार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के पाँच अंश नीचे सिधान पर एक बिन्दु बनाकर उससे दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर वायव्य के दोनों त्रिकोणों और नैर्ऋत्य के दोनों त्रिकोणों के कोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। तृतीय शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा जो ईशान से आग्नेय तक अंकित है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं को मिला दें।

इसी प्रकार प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण के ५ अंश सीधे ऊपर एक बिन्दु बनावें। उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर ईशान और आग्नेय के दोनों त्रिकोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। द्वितीय शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा, जो वायव्य से नैर्ऋत्य तक है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसके बाद तृतीय शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं का ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ा दें। एक तिर्यक रेखा प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई ईशान से आग्नेय की ओर खींचकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसी प्रकार द्वितीय शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं के वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ा दें। एक तिर्यक रेखा प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर खींचकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें। इस प्रकार बहिर्दशार चक्र बन जाता है। इसमें चार शक्ति त्रिकोण और तीन शिव त्रिकोण बन जाते हैं। जैसा निम्नांकित चित्रांक ५ है।

चित्र ५

चित्र ३

अष्टार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के तीन अंश नीचे सीधान पर एक बिन्दु बनाकर उससे दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर वायव्य और नैर्ऋत्य के दोनों त्रिकोणों को कोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। ईशान और आग्नेय की ओर दूसरे शक्ति त्रिकोण की जो तिर्यक रेखा है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर इन दोनों रेखाओं को मिला दें।

इसके बाद दूसरे शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को ईशान आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ायें। प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा ईशान से आग्नेय तक खींचे। उक्त बढ़ी हुई दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसी प्रकार प्रथम शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ावें। प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा वायव्य से नैर्ऋत्य तक खींचकर उक्त दोनों बढ़ी पार्श्व रेखाओं से मिला दें। इस प्रकार अन्तर्दशार चक्र बन जाता है। जैसा चित्रांक ४ निम्नांकित है।

चित्र ४

इस अन्तर्दशार चक्र में तीन शक्ति त्रिकोण और दो ऊर्ध्व मुख शिव त्रिकोण हैं। चारों ओर छोटे-छोटे दश त्रिकोण हैं।

इस अन्तर्दशार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के पाँच अंश नीचे सिधान पर एक बिन्दु बनाकर उससे दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर वायव्य के दोनों त्रिकोणों और नैर्ऋत्य के दोनों त्रिकोणों के कोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। तृतीय शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा जो ईशान से आग्नेय तक अंकित है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं को मिला दें।

इसी प्रकार प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण के ५ अंश सीधे ऊपर एक बिन्दु बनावें। उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर ईशान और आग्नेय के दोनों त्रिकोणों को स्पर्श करती हुई खींचे। द्वितीय शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा, जो वायव्य से नैर्ऋत्य तक है, उसके दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसके बाद तृतीय शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं का ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ा दें। एक तिर्यक रेखा प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई ईशान से आग्नेय की ओर खींचकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसी प्रकार द्वितीय शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं के वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ा दें। एक तिर्यक रेखा प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर खींचकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दें। इस प्रकार बहिर्दशार चक्र बन जाता है। इसमें चार शक्ति त्रिकोण और तीन शिव त्रिकोण बन जाते हैं। जैसा निम्नांकित चित्रांक ५ है।

चित्र ५

चतुर्दशार चक्र बनाने के लिये चित्रांक ५ में अंकित बहिर्दशार चक्र के प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण के ६ अंश ऊपर सीध में एक बिन्दु बनावें। उससे दो पार्श्व रेखाएँ वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर इस प्रकार से खींचे कि वह ईशान के दोनों त्रिकोणों और आग्नेय के दोनों त्रिकोणों के कोनों को स्पर्श करती हुई डमरू के नीचे तक जाय। फिर प्रथम शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा जो वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर डमरू तक गई है, उसे थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दे।

इसके बाद बहिर्दशार चक्र के प्रथम शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर बढ़ावें। तृतीय शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ा कर उक्त पार्श्व रेखाओं से मिला दें। पुनः तृतीय शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं के वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर बढ़ावें। प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर खींचकर उसमें मिला दें।

अब इसी प्रकार बहिर्दशार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण के छः अंश नीचे सीध में एक बिन्दु बनावें। उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर इस प्रकार खींचे कि वायव्य के दोनों त्रिकोणों के कोणों को स्पर्श करती हुई बहिर्दशार के डमरू के ऊर्ध्व भाग तक जाये। तब प्रथम शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ा कर पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसके बाद प्रथम शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को जो डमरू के ऊपरी भाग तक जाती हैं, ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ावें। चतुर्थ शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को भी ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उनसे मिला दें। तब चतुर्थ शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ायें। प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा ईशान से आग्नेय तक खींचकर उसमें मिला दें। इस प्रकार चतुर्दशार चक्र बन जाता है। जैसा निम्नांकित चित्रांक ६ है। इसके बाहर एक वृत्त खींचे, जो प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण, प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण और दोनों डमरूओं के दो-दो कोणों को स्पर्श करे।

चित्र ६

वृत्त के ऊपर और नीचे समान दूरी पर एक वृत्त खींचे। फिर दूसरा वृत्त खींचे। दोनों वृत्तों के मध्य में जो ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ स्थान हैं, उसे बराबर-बराबर आठ भागों में बाँटकर अष्टदल कमल बनावें। ध्यान रहे कि चारों दिशाओं में दल के मुख भूपुर के मध्य द्वार की ओर रहे।

इसी प्रकार ऊपर के वृत्त से समान दूरी पर तीन वृत्त बनाकर उसके

चित्र ७

चतुर्दशार चक्र बनाने के लिये चित्रांक ५ में अंकित बहिर्दशार चक्र के प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण के ६ अंश ऊपर सीध में एक बिन्दु बनावें। उससे दो पार्श्व रेखाएँ वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर इस प्रकार से खींचे कि वह ईशान के दोनों त्रिकोणों और आग्नेय के दोनों त्रिकोणों के कोनों को स्पर्श करती हुई डमरू के नीचे तक जाय। फिर प्रथम शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा जो वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर डमरू तक गई है, उसे थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उक्त दोनों पार्श्व रेखाओं से मिला दे।

इसके बाद बहिर्दशार चक्र के प्रथम शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर बढ़ावें। तृतीय शिव त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ा कर उक्त पार्श्व रेखाओं से मिला दें। पुनः तृतीय शिव त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं के वायव्य और नैर्ऋत्य की ओर बढ़ावें। प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा वायव्य से नैर्ऋत्य की ओर खींचकर उसमें मिला दें।

अब इसी प्रकार बहिर्दशार चक्र के प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण के छः अंश नीचे सीध में एक बिन्दु बनावें। उस बिन्दु से दो पार्श्व रेखाएँ ईशान और आग्नेय की ओर इस प्रकार खींचे कि वायव्य के दोनों त्रिकोणों के कोणों को स्पर्श करती हुई बहिर्दशार के डमरू के ऊर्ध्व भाग तक जाये। तब प्रथम शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को थोड़ा-थोड़ा बढ़ा कर पार्श्व रेखाओं से मिला दें।

इसके बाद प्रथम शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को जो डमरू के ऊपरी भाग तक जाती हैं, ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ावें। चतुर्थ शक्ति त्रिकोण की तिर्यक रेखा के दोनों छोरों को भी ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ाकर उनसे मिला दें। तब चतुर्थ शक्ति त्रिकोण की दोनों पार्श्व रेखाओं को ईशान और आग्नेय की ओर थोड़ा-थोड़ा बढ़ायें। प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण को स्पर्श करती हुई एक तिर्यक रेखा ईशान से आग्नेय तक खींचकर उसमें मिला दें। इस प्रकार चतुर्दशार चक्र बन जाता है। जैसा निम्नांकित चित्रांक ६ है। इसके बाहर एक वृत्त खींचे, जो प्रथम शिव त्रिकोण के पूर्व कोण, प्रथम शक्ति त्रिकोण के पश्चिम कोण और दोनों डमरूओं के दो-दो कोणों को स्पर्श करे।

चित्र ६

वृत्त के ऊपर और नीचे समान दूरी पर एक वृत्त खींचे। फिर दूसरा वृत्त खींचे। दोनों वृत्तों के मध्य में जो ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ स्थान हैं, उसे बराबर-बराबर आठ भागों में बाँटकर अष्टदल कमल बनावें। ध्यान रहे कि चारों दिशाओं में दल के मुख भूपुर के मध्य द्वार की ओर रहे।

इसी प्रकार ऊपर के वृत्त से समान दूरी पर तीन वृत्त बनाकर उसके

चित्र ७

बाहर एक वृत्त बनावें। उसमें ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ समान रिक्त स्थान है। उसे बराबर सोलह भागों में बाँटकर सोलह दल का कमल बनावें। यहाँ पर भी चारों दिशाओं में दल के मुख भूपुर के मध्य द्वार की ओर हों। जैसा चित्रांक ७ है।

चित्रांक ७ में अन्दर अष्टदल है। उसके बाहर षोडशदल है।

अन्त में सबसे बाहर के वृत्त से चार-चार अंश ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ बराबर दूरी पर चार द्वारों से युक्त तीन रेखाओं वाला भूपुर खींचे। इस प्रकार श्रीचक्र तैयार हो जाता है। जैसा निम्नांकित चित्र ८ है।
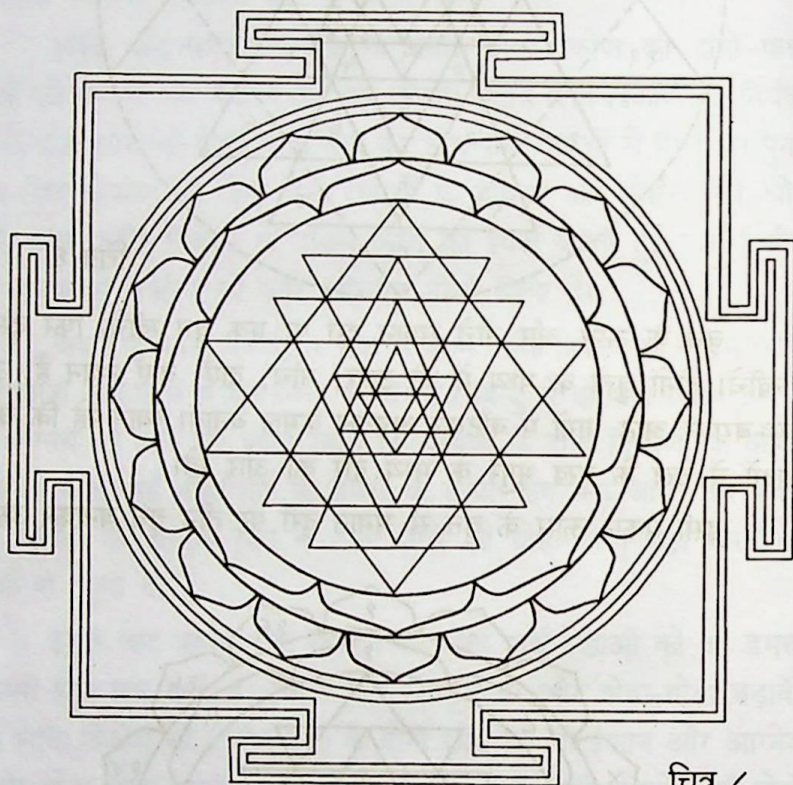
चित्र ८

पूरा चक्र ७२ अंश का होता है। जो इस प्रकार का है।

वृत्त बिन्दु से ऊपर और नीचे	ऊपर अंश	नीचे अंश
चौथी और छठी तिर्यक रेखा	५ $\frac{१}{२}$	५ $\frac{१}{२}$
तीसरी और आठवीं तिर्यक रेखा	३	३
दूसरी और आठवीं तिर्यक रेखा	३	३
प्रथम और नवम तिर्यक रेखा	५	५

सबसे ऊपर और नीचे का शिव शक्ति त्रिकोण	६	६
अष्टदल कमल	४ १/२	४ १/२
षोडशदल कमल	५	५
भूपुर	४	४

मध्ये तु द्वितीयं स्थित्वा संहारं पञ्चमं च यत्।
एवमेतन्महाचक्रं महाश्रीत्रिपुरामयम्।।४१।।
क्लेदनं द्रावणं चैव क्षोभणं मोहनं तथा।
आकर्षणं महादेवि जम्भनं स्तम्भनं तथा।।४२।।

इस महाश्रीचक्र में चार ऊर्ध्वमुख त्रिकोण और पाँच अधोमुख त्रिकोण हैं। यह महाचक्र महात्रिपुरसुन्दरीमय उनका स्वरूप है। इससे क्लेदन, द्रावण, क्षोभण, मोहन, आकर्षण, जम्भन और स्तम्भन आदि अनेक क्रियाएँ की जा सकती हैं। इसे महाश्रीचक्र कहते हैं।

व्याधिदारिद्र्यशमनं सर्वदुर्नीतिनाशमन्।
शान्तिपुष्टिधनारोग्यमन्त्रसिद्धिकरं परम्।।४३।।

इसकी पूजा करने से सभी रोगों और दरिद्रता का नाश होता है। सभी कष्टप्रद स्थितियों का विनाश होता है। मानसिक शान्ति, शरीर को पुष्टि, आरोग्य की प्राप्ति और सभी मन्त्र सिद्ध होते हैं।

भोगदं मोक्षदं चैव खेचरत्वप्रवर्त्तकम्।
सर्वरक्षाकरं देवि सर्वानन्दकरं तथा।।४४।।

इसके अर्चन से भोग सांसारिक सुख, मोक्ष, जन्म-मृत्यु से छुटकारा और आकाश गमन की क्षमता प्राप्त होती है। सभी प्रकार से रक्षा होती है। सभी प्रकार के आनन्ददायी सुख प्राप्त होते हैं।

सर्वकर्मकरं चापि सर्वकार्यार्थसाधकम्।
सर्वावेशकरं देवि सर्ववेधकरं पुनः।।४५।।

इसके अर्चन से सभी कार्य सिद्ध होते हैं। सभी कर्म सार्थक होते हैं। सभी प्रकार के आवेश जैसे देवावेश, प्रेतावेश होते हैं। इससे सभी प्रकार के वेध होते हैं।

सर्वतत्त्वकरं देवि सर्वज्ञाननिलयं तथा।
सर्वसिद्धिसंयुतं चैव सर्वश्रेयस्करं परम्।।४६।।

इसके पूजन से सभी सत्त्वों की प्राप्ति होती है। यह सभी ज्ञानों का आगार है। इससे सभी सिद्धियों अणिमादि की प्राप्ति होती है। यह सभी सर्वोत्तम कार्यों को करने वाला है।

सर्वमन्त्रमयं देवि सर्वतीर्थमयं पुनः।
सर्वव्रतमयं चैव सर्वामृतमयं तथा।।४७।।

यह सभी मन्त्रों का स्वरूप है। यह सभी तीर्थों का आवास है। इसके अर्चन से सभी व्रतों के फल मिलते हैं। यह सभी अमृतों का आवास है।

सर्वदुःखप्रशमनं सर्वशोकनिवारणम्।
सर्वोन्मादकरं देवि सर्वयोगीश्वरीमयम्।।४८।।

इसके अर्चन से सभी दुःखों का अन्त होता है। सभी शोकों का निवारण होता है। इससे सभी को उन्मादग्रस्त किया जा सकता है। यह सभी योगीश्वरियों का आवास है।

सर्वपीठमयं देवि सर्वज्ञानमयं प्रिये।
सर्वदेवमयं देवि सर्वाह्लादनकारकम्।।४९।।

इसमें सभी शक्तिपीठों का आवास है। इससे सभी ज्ञान प्राप्त होते हैं। यह सभी देवों का स्वरूप है। यह सभी प्रकार के आनन्दों को देने वाली देवी हैं।

सर्वदौर्भाग्यशमनं सर्वविघ्ननिवारणम्।
सर्वसिद्धिकरं चक्रं सर्वाशापरिपूरकम्।।५०।।

यह सभी खराब भाग्यों का विनाशक है। सभी प्रकार के विघ्नों का निवारक है। यह सभी सिद्धियों का प्रदाता है। यह चक्र सभी आशाओं, इच्छाओं को पूरी करता है।

रौद्राभिचारकोच्चण्डं परमन्त्रौघभक्षकम्।
परसिद्ध्याकर्षणं च पराज्ञाकर्षणं तथा।।५१।।

शत्रुओं के सभी अभिचारिक मारक मन्त्रों का विनाशक है। परम सिद्धियों का आकर्षक और ज्ञान का महान आकर्षक है।

परसैन्यस्तम्भकरं परविज्ञानमोहनम्।
परवक्त्रस्तम्भकरं च शस्त्रस्तम्भकरं परम्।।५२।।

शत्रु सेना को स्तम्भित करने वाला, दूसरों के विज्ञान को मोहित करने

वाला, शत्रु के मुख को बन्द करने वाला और सभी शस्त्रों को स्तम्भित करने वाला है।

महाचमत्कारकरं महाभुक्तिप्रवर्तकम्।
महावश्यकरं देवि महासौभाग्यदायकम्।।५३।।

सभी आश्चर्यजनक कार्यों को करने वाला, सांसारिक महाभोगों को देने वाला, सबों को वशीभूत करने वाला और परम सौभाग्य को देने वाला है।

महाज्वरहरं देवि महाविषहरं परम्।
महामृत्युप्रशमनं महाभयविनाशनम्।।५४।।

कष्टकर बुखारों का विनाशक और भयंकर विष (जहर) को हरने वाला है। यह महामृत्यु का विनाशक और महाभय (भारी डर) को नष्ट करने वाला है।

महापुरक्षोभकरं महासुखशुभप्रदम्।
महालक्ष्मीमयं देवि महामङ्गल्यदायकम्।।५५।।

बड़े-बड़े नगरों को क्षुब्ध करने वाला और सर्वश्रेष्ठ सुखद और कल्याण करने वाला है। बहुत धन देने वाला और महामांगल्य प्रदायक है।

महाप्रभावसंयुक्तं महापातकनाशनम्।
एवमेतस्य चक्रस्य प्रभावो वर्णितुं मया।।५६।।
न शक्यते महादेवि कल्पकोटिशतैरपि।

यह बहुत प्रभावकारक है। महापापों का विनाशक है। इस चक्र के प्रभावों को वर्णन करने की सामर्थ्य मुझमें नहीं है। हे महादेवि! सौ करोड़ कल्पों में भी वर्णन नहीं किया जा सकता।

एतद्बाह्यगतं पद्ममष्टपत्रं समालिखेत्।।५७।।
तद्बाह्यतोऽपि देवेशि षोडशारं तथैव च।
परिवेशसमायुक्तं चतुर्द्वारोपशोभितम्।।५८।।

श्रीचक्र का निर्माण (श्लोक ४० तक) चतुर्दशार तक करने के बाद इसके बाहर अष्टदल कमल बनावें। उसके बाहर षोडशदल कमल बनावें। इसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन भूपुर रेखाओं को बनावें। इसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

संस्थिताऽत्र महाचक्रे महात्रिपुरसुन्दरी।
शृणु देवि यथा सा तु पूज्यते साधकोत्तमैः।।५९।।

वर्गानुक्रमयोगेन देवताष्टकसंयुता।

इस महाचक्र में महात्रिपुरसुन्दरी स्थित रहती हैं। हे देवि पार्वती! अब यह सुनिये कि साधकोत्तम इसमें किस प्रकार पूजा करते हैं। वर्गानुक्रम योग से अष्टदेवता संयुक्त महाचक्र में साधकोत्तम पूजा करते हैं।

अवर्गः प्रथमो देवि वशिनी तत्र देवता।।६०।।

प्रथम वर्ग में अ आ इ ई... अं अः तक सोलह स्वर रहते हैं। इस वर्ग की देवी वशिनी हैं।

तत्परस्तु कवर्गोयस्तत्र कामेश्वरी स्थिता।
मोदिनी तु चवर्गस्था टवर्गे विमला स्मृता।।६१।।

दूसरा कवर्ग है, जिसमें क ख ग घ ङ वर्ण रहते हैं। इस वर्ग की देवी कामेश्वरी हैं। तीसरा चवर्ग है, इसमें च छ ज झ ञ अक्षर हैं। इसकी देवी को मोदिनी कहते हैं। चौथा वर्ग टवर्ग है, इसमें ट ठ ड ढ ण अक्षर रहते हैं। इसकी देवी विमला हैं।

अरुणा तु तवर्गस्था पवर्गे जयिनी तथा।
सर्वेश्वरी यवर्गे तु शवर्गे कौलिनीति च।।६२।।

पाँचवां त थ द ध न युक्त तवर्ग की देवी अरुणा हैं। छठे प फ ब भ म युक्त पवर्ग की देवी जयिनी हैं। सातवें य र ल व युक्त यवर्ग की देवी सर्वेश्वरी हैं, आठवें श ष स ह क्ष युक्त शवर्ग की देवी कौलिनी हैं।

एता वर्गाष्टके देवि अष्टावेवहि देवताः।
अर्चिताः पुरुषस्याशु प्रकुर्वन्ति वशं जगत्।।६३।।

इन आठों वर्गो के आठ देवता हैं। जो मनुष्य इनकी पूजा करता है, उसके वश में सारा संसार हो जाता है। आठ वर्गो की तालिका निम्नांकित है—

१. अवर्ग की देवी वशिनी	२. कवर्ग की देवी कामेश्वरी
३. चवर्ग की देवी मोदिनी	४. टवर्ग की देवी विमला
५. तवर्ग की देवी अरुणा	६. पवर्ग की देवी जयिनी
७. यवर्ग की देवी सर्वेश्वरी	८. शवर्ग की देवी कौलिनी

उद्धरेत्प्रथमं रेफं तदधः कुटिलान्तकम्।
तदप्यवनिबीजस्थं षष्ठस्वरसमन्वितम्।।६४।।

ऊर्ध्वमर्धेन्दुबिन्द्वाढ्यं कारयेत्परमेश्वरि।
एतत्तु वशिनीबीजं योगिनीनां मुखे स्थितम्।।६५।।

पहले 'र' लिखें तब 'ब' लिखें तब 'ल' के साथ छठा स्वर ऊ लिखें उसके ऊपर चन्द्र बिन्दु लिखें। इससे योगियों के मुख में स्थित रहने वाला वशिनी बीज 'ब्लूँ' बनता है।

द्वितीयवर्गाप्रथममैन्द्रारूढं महेश्वरि।
अधस्तान्नाभसं बीजमाग्नेयस्थं समुद्धरेत्।।६६।।
चतुर्थस्वरसंयुक्तं बिन्दुखण्डेन्द्वलंकृतम्।
एतत्कामेश्वरीबीजं त्रैलोक्यक्षोभकारकम्।।६७।।

द्वितीय वर्ग कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क' को इन्द्र बीज 'ल' से युक्त लिखें। इसके साथ नाभस बीज 'ह' को अग्निबीज 'र' से युक्त लिखें। इन्हें चौथे स्वर 'ई' से युक्त करें। इस पर चन्द्र बिन्दु लगावें। तब त्रैलोक्य क्षोभकारक कामेश्वरी बीज 'क्ल्हीं' बनता है।

अरुणापञ्चमस्याधो वारुणं विनियोजयेत्।
तदधोऽपीन्द्रबीजं तु सर्वोर्ध्वमिपरं प्रिये।।६८।।
एतत्तन्मोदिनीबीजं सर्वसत्त्ववशङ्करम्।

पहले तवर्ग का पाँचवां अक्षर 'न' लिखें। इसे वरुण बीज 'ब' से युक्त करें, तब इन्द्रबीज 'ल' और 'ई' और बिन्दु से युक्त करें। इस प्रकार सर्व तत्त्वों को वश में करने वाला मोदिनी बीज 'न्ब्लीं' बनता है।

वायव्यमिन्द्रबीजस्थं षष्ठस्वरसमन्वितम्।।६९।।
अर्धेन्दुमस्तकाक्रान्तं बिन्दुनापरिभूषितम्।
एतत्ते कथितं देवि विमलाबीजमुत्तमम्।।७०।।
सर्वपापक्षयकरं सर्वोपद्रवनाशनम्।

पहले वायु बीज 'य' लेवें, इसे इन्द्र बीज 'ल' छठे स्वर 'ऊ' और बिन्दु से युक्त करें, तो विमला बीज 'य्लूं' बनता है। यह बीज सभी पापों का विनाशक और सभी उपद्रवों का नाश करने वाला है।

जकारं कालमारूढं तदधो ज्वलनाक्षरम्।।७१।।
चतुर्थस्वरसंभिन्नं बिन्दुनादसमन्वितम्।
एतत्तदरुणाबीजमरुणं सर्वमोहनम्।।७२।।

अक्षर 'ज' के साथ काल 'म', अग्नि 'र', चौथे स्वर 'ई' और बिन्दु को युक्त करें। इससे अरुणाबीज 'ज्म्रीं' बनता है। यह बीज सर्वमोहन है।

शिवबीजं तदादिस्थमधस्तादैन्द्रवारुणौ।
वायव्यमुपरोद्धिन्नं संयोज्य परमेश्वरि।।७३।।
जयिनीबीजमेवेदं नादबिन्दुविभूषितम्।

शिव बीज 'ह' के साथ 'स' इन्द्र बीज 'ल', वरुण बीज 'बं', वायु बीज 'य' और स्वर अं को बिन्दु के साथ युक्त करें, तब जयिनी बीज 'ह्स्ल्ब्यूं' बनता है।

ऊद्धरेन्मोदिनीवर्गचतुर्थं परमेश्वरि।।७४।।
अधः कालाग्निवायव्यान्क्रमेण विनियोजयेत्।
दीर्घायुर्बीजसंयुक्तान्यथानुक्रमयोगतः ।।७५।।
उपरीश्वरबिन्द्वन्तानेकत्र सुरसुन्दरि।
एतत्सर्वश्वरीबीजं सर्वत्रैवापराजितम्।।७६।।

मोदिनी वर्ग चवर्ग के चौथे अक्षर 'झ' के साथ काल बीज 'म', अग्नि बीज 'र', वायु बीज 'यं' दीर्घायु बीज ऊ और बिन्दु से युक्त करें, तो 'झ्म्र्यूं' सर्वेश्वरी का बीज बनता है। यह सर्वत्र अपराजित रहता है।

कौलिनीपञ्चमं देवि कालबीजोपरिस्थितम्।
सर्वाधस्तादपि तथा बह्निबीजं नियोजयेत्।।७७।।
चतुर्थस्वरसंयुक्तं बिन्द्विन्दुसमलंकृतम्।
एतद्बीजवरं भद्रे कौलिनीरूपमास्थितम्।।७८।।

कौलिनी के पाँचवां अक्षर 'क्ष' के साथ काल बीज 'म', अग्नि बीज 'र', चौथा स्वर 'ई' और बिन्दु के युक्त करने से कौलिनी बीज 'क्ष्म्रीं' बनता है। इस बीज में कौलिनी स्थित रहती हैं।

एतमेतानि बीजानि क्रमादष्टौ महेश्वरि।
कथितानि महादेवि शृणु विद्याङ्गरूपिणीः।।७९।।

ओ महेश्वरी! इस प्रकार क्रम से आठ बीजों का उद्धार किया गया। महादेवी! अब मैं श्रीविद्या के अंग विद्या का वर्णन करता हूँ।

करशुद्धिकरी विद्यां तथाऽङ्गन्यासससंस्थिताम्।
आत्मासनगतां चापि तथा चक्रासनस्थिताम्।।८०।।

सर्वमन्त्रासनगतां साध्यसिद्धासनस्थिताम्।
देव्यावाहनविद्याऽपि मूलविद्यामपि प्रिये।।८१।।

प्रिये! अंग विद्याओं में गणित निम्नांकित हैं—

१. करशुद्धिकरी, २. षडङ्गअङ्गन्यास, ३. आत्मासनगता, ४. चक्रासन स्थिता, ५. सर्वमन्त्रासनगता, ६. साध्यसिद्धासनगता, ७. देवी आवाहन विद्या, ८. मूलविद्या।

वाग्भवं प्रथमं देवि कामराजं द्वितीयकम्।
शान्तान्तं कादिसंयुक्तमैकारान्तान्तयोजितम्।।८२।।
एषा विद्या महेशानि करशुद्धिकरी स्मृता।

करशुद्धिकरी विद्या—पहले वाग्भव 'ऐं', दूसरे कामराज 'क्लीं', तीसरे शान्तान्त कादिसंयुक्तं ऐकारान्तान्तयोजितम सौः अर्थात् 'ऐं क्लीं सौः' करशुद्धिकरी विद्या है। रुद्रयामल तन्त्र के अनुसार 'ऐं' सर्वोत्तम अक्षर है, जब इसके साथ क्लीं सौः होता है।

ए-ओमध्यगतं बीजं वाग्विधानाय केवलम्।।८३।।
रुद्रयामलतन्त्रे तु निर्दिष्टं परमाक्षरम्।
मादनं शक्रसंयुक्तं चतुर्थस्वर संयुतम्।।८४।।
ऊर्ध्वमर्धेन्दुबिन्द्वाढ्यं आद्यन्ते तत्परं पुनः।
शान्तान्तं कादिसंयुक्तमैकारान्तान्तयोजितम्।।८५।।

'ए' और 'ओ' के बीच का अक्षर 'ऐं' केवल वाग्विधान के लिये है। रुद्रयामल तन्त्र में इसे सर्वोत्तम अक्षर कहा गया है। मादन 'क' शक्र 'ल' चतुर्थ स्वर 'ई' और बिन्दु के योग से 'क्लीं' बनता है। इसके पहले 'ऐं' और बाद में 'सौः' लगाने से शक्ति मन्त्र 'ऐं क्लीं सौः' बनता है।

एषा विद्या महाविद्या योगिनीनां महोदया।
कुलविद्या महेशानि सर्वकार्यार्थसाधिकी।।८६।।

यह महाविद्या सभी विद्याओं की विद्या है। यह योगिनियों को प्रकट होने के लिये बाध्य करती है। ओ महेशानि! यह कुलविद्या है। इससे साधकों की सभी इच्छाएँ पूरी होती है।

अनया विद्यया गौरि रक्षामात्मनि कारयेत्।
एतस्या एव विद्यायाः शिवमायाग्निबिन्दुमत्।।८७।।
बीजमादिपदे युक्त्वा कार्यात्मासनरूपिणी।

इसके बाद ओ गौरी! आत्मरक्षा विद्या जपना चाहिये। इस विद्या का स्वरूप यह है—'शिव 'ह', अग्नि 'र', माया 'ई' और बिन्दु के योग से 'ह्रीं' बनता है। इस बीज को पहले रखकर बाद आत्मासन विद्या के बीज 'क्लीं सौ:' लिखने से आत्मरक्षाकरी विद्या 'ह्रीं क्लीं सौ:' बनती है।

पुनर्विद्याद्यमस्योर्ध्वमन्तरं तु शिवान्वितम्।।८८।।
त्रैलोक्यमोहिनीयं सा विद्या चक्रासनस्थिता।

तब करशुद्धिकरी विद्या के पहले बीज 'ऐं', मध्य बीज 'क्लीं' और अन्तिम बीज 'सौ:' के साथ 'ह' जोड़ने से 'हैं ह्क्लीं ह्सौ:' विद्या बनती है। इसे चक्रासन विद्या कहते हैं। इसे त्रैलोक्यमोहन करते हैं।

पुनराद्यां महाविद्यां शिवचन्द्रसमन्विताम्।।८९।।
कृत्वा कामप्रदा विद्या सर्वमन्त्रासनस्थिता।

करशुद्धिकरी विद्या 'हैं हैक्लीं ह्सौ:' के प्रत्येक बीज के साथ 'ह सैं' जोड़ने से 'हसैं ह्स्क्लीं हस्सौ:' सर्वमन्त्रासन विद्या बनती है।

देव्यात्मासनविद्याया: पूर्वोक्ताया यथाक्रमम्।।९०।।
अन्तदेशे तोयबिन्दुशक्रशक्तीरनुक्रमात्।
संयोज्य परमेशानि साकमर्धेन्दुनातत:।।९१।।

तोयं 'ब' शक्रो 'ल' शक्ति चतुर्थ स्वर 'ई' के साथ बिन्दु के योग से देवी की आत्मासन विद्या 'ब्लीं' बनती है।

केवलाक्षरभेदेन साध्यसिद्धासनस्थिता।

केवल अक्षर भेद से साध्यासन विद्या बनती है। वह विद्या 'ह्रीं क्लीं ब्लीं' है।

हंससोमसमारूढामाद्यामग्न्यासनस्थिताम् ।।९२।।
सर्वार्थसाधिका विद्या देव्यावाहनकर्मणि।

करशुद्धिकरी विद्या 'ऐं क्लीं सौ:' के प्रत्येक अक्षर के साथ हंस सोम अर्थात् 'ह स' लगाने से अग्न्यासन विद्या बनती है।

एवमेता महाविद्या देवि सर्वार्थसिद्धिदा:।।९३।।

इस प्रकार हे देवि! ये सभी महाविद्याएँ सर्वार्थ सिद्धिदा हैं।

महात्रिपुरसुन्दर्या मूलविद्यां शृणु प्रिये।
मादनं तदध: शक्तिस्तदधो बिन्दुमालिनी।।९४।।

ऐन्द्रमाकाशबीजस्थमधस्ताज्ज्वलनाक्षरम्।
मायाबिन्द्वीश्वरयुतां सर्वोपरिनियोजिता।।९५।।
अयं स वाग्भवो देवि वागीशत्वप्रवर्तकः।

प्रिये! अब महात्रिपुरसुन्दरी की मूलविद्या को सुनिये। मादन क, शक्ति ए, बिन्दुमालिनी ई, ऐन्द्र ल, आकाश बीज ह,ज्वलनाक्षर र माया ई और बिन्दु के योग से मूलविद्या के वाग्भव कूट क ए ई ल ह्रीं बनता है। यह कूट वागीशत्व प्रदायक है। सम्यक् प्रत्ययकारक है।

शिवबीजं त्रिधा युक्त्वा सृष्टिस्थितिलयक्रमै।।९६।।
द्वयमाद्येन रहितमाद्याधो मदनाक्षरम्।
पुनः स्थितिशिवाधस्तादिन्द्रबीजं नियोजयेत्।।९७।।
तथा लयशिवाधोऽपि ज्वलनं च महेश्वरि।
चतुर्थस्वरसंयुक्तं बिन्दुखण्डेन्द्वलंकृतम्।।९८।।
एवमेतन्महाबीजं कामराजं महोदयम्।

शिवबीज 'ह' मादन 'क', शिवबीज 'ह', इन्द्र 'ल', शिव 'ह', ज्वलन 'र', चतुर्थ 'ई' और बिन्दु के योग से कामराज कूट 'ह क ह ल ह्रीं' बनता है। इसे महाबीज कामराज कहते हैं। इसके उच्चारण से ही जगत्क्षोभ हो जाता है।

मायाबीजं महेशानि मादनं शक्रसंयुतम्।।९९।।
चन्द्रबीजं केवलं तु विनियोज्य वरानने।
त्यक्त्वा सृष्टिक्रमं देवि प्रागुच्चारक्रमेण तु।।१००।।
संहारक्रमयोगेन शक्तिबीजं समुद्धरेत्।

केवल 'ह', चन्द्रबीज 'स', मदन 'क शक्रल, मायाबीज 'ह्रीं' के योग से शक्तिकूट 'ह स क ल ह्रीं' बनता है। इसके ज्ञान मात्र से सभी प्रकार के विषों का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

इस प्रकार पूरा मन्त्र—'क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं' है।

एवमेषा महाविद्या महात्रिपुरसुन्दरी।।१०१।।
संस्मृतैव महादेवि त्रैलोक्यवशकारिणी।
एतयैतस्य चक्रस्य साधकोऽर्चनमारभेत्।।१०२।।

महात्रिपुरसुन्दरी की यह महाविद्या इस प्रकार की है। स्मरण मात्र से ही यह तीनों लोकों को वश में कर देती है। इस विद्या से साधक श्रीचक्र का अर्चन प्रारम्भ करे। साधना करे।

कुंकुमारुणदेहस्तु वस्त्रारुणविभूषितः।
ताम्बूलपूरितमुखो धूपामोदसुगन्धितः।।१०३।।
कर्पूरक्षोददिग्धाङ्गो रक्ताभरणमण्डितः।
रक्तपुष्पावृतो मौनी रक्तगन्धानुलेपनः।।१०४।।
रक्तास्तरोपविष्टस्तु लाक्षारुणगृहे स्थितः।
सर्वशृङ्गारवेषाढ्यस्त्रिपुरीकृतविग्रहः ।।१०५।।

साधना से सिद्धि प्राप्त करने के लिये दृढ़ संकल्प करके स्थिर मानस साधक भावना करे कि वह महात्रिपुरसुन्दरी स्वरूप है। 'मैं त्रिपुरसुन्दरी हूँ' ऐसी भावना करे। उसका शरीर कुंकुम के समान लाल है। वह लाल वस्त्रों से विभूषित है। उसका मुख पान से पूर्ण है। स्थान धूप आमोद से सुगन्धित है। उसका शरीर कपूर लेप से लिप्त है। वह लाल आभरणों से मण्डित हैं। लाल फूलों से ढका हुआ है। वह मौन धारण करे। उसका शरीर हरिचन्दन अलता के अनुलेप से अनुलिप्त है। वह लाल आसनी पर बैठा है। उसका कमरा लाह के समान लाल रंग का है। सभी शृङ्गार वेष से युक्त वह त्रिपुरकृत विग्रह है।

मन संकल्परक्तो वा साधकः स्थिरमानसः।
भूप्रदेशे समे शुद्धे गोमयेनोपलेपिते।।१०६।।
पुष्पप्रकरसंकीर्णे धूपामोदसुगन्धिते।
सिन्दूररजसा देवि कुंकुमेनाथवा पुनः।।१०७।।
आलिखेत्प्रथमं चक्रं मसरेखं मनोरमम्।
समत्रिकोणशक्त्यग्रं सश्रीकमतिसुन्दरम्।।१०८।।

संकल्पित मन स्थिर मानस साधक जहाँ बैठा हो, वह भूतल समतल शुद्ध गोबर से लिपा हुआ हो। उस पर नाना प्रकार के फूल विकीर्ण हो। धूप आमोद से सुगन्धित हो। सिन्दूर या कुंकुम चूर्ण से समरेख मनोहर रूप का प्रथम चक्र लिखें। शक्ति त्रिकोण समकोण हो और शक्ति कोण का अग्रभाग साधक के सम्मुख हो। कोण समान और सुन्दर हो।

ध्यात्वा पुरत्रयं देवि बीजत्रयसमन्वितम्।
सर्वाद्यविद्यया देवि करशुद्धिं तु कारयेत्।।१०९।।

बीजत्रय 'क ए ई ल ह्रीं, ह क ह ल ह्रीं, ह स क ल हीं' समन्वित पुरत्रय का ध्यान करे। पुरत्रय में स्वर्गलोक, भूलोक और पाताल लोक, शरीर में गुह्य, हृदय, भ्रूमध्य, वाक्, मन, काय, सूर्य, चन्द्र, अग्नि आते हैं। इसके बाद सबसे पहली विद्या करशुद्धि विद्या से हाथों की शुद्धि करें।

तत आत्मासनं दद्याच्चक्रासनमथेश्वरि।
सर्वमन्त्रासनं देवि साध्यसिद्धासनं तथा।।११०।।

इसके बाद आत्मासन विद्या से आत्मा को आसन प्रदान करें। तब चक्रासन विद्या से बिन्दु चक्र में देवी को आसन प्रदान करें। तब सर्वमन्त्रासन मन्त्र से सभी मन्त्रों का आसन देवें। इसके बाद साध्स सिद्धासन विद्या से साध्य सिद्धासन प्रदान करें।

ततो रक्षां प्रकुर्वीत पूर्वोक्तकुलविद्यया।
षडङ्गन्यासयोगेन नमस्कारादियुक्तया।।१११।।

पूर्वोक्त कुलविद्या 'ऐं क्लीं सौः' से आत्मरक्षा करें। तब षडंगन्यास और नमस्कारादि करें।

शिखाललाटभ्रूमध्यकण्ठहन्नाभिगोचरे ।
आधारेऽप्यूहकं यावन्न्यासमष्टभिराचरेत्।।११२।।

शिखा, ललाट, भ्रूमध्य, कण्ठ, हृदय, नाभि, लिंग और मूलाधार में आठ न्यास करें। वशिनी आदि आठ बीजों से न्यास करें। पूर्वोक्त बीज 'ब्लूँ क्ल्हीं न्ब्लीं य्लूं ज्म्री ह्स्ल्व्यूं झम्रयूं क्ष्म्रीं है। न्यास इस प्रकार करें।

१. ब्लूँ वशिनी वाग्देवतायै नमः। शिखाय
२. क्ल्हीं कामेश्वरी वाग्देवतायै नमः। ललाटे
३. न्ब्लीं मोदिनी वाग्देवतायै नमः। भ्रूमध्ये
४. प्लूं विमला वाग्देवतायै नमः। कण्ठे
५. ज्म्रीं अरुणा वाग्देवतायै नमः। हृदये
६. हस्ल्व्यूं जयिनी वाग्देवतायै नमः। नाभिमध्ये
७. झम्रयूं सर्वेश्वरी वाग्देवतायै नमः। लिंगे
८. क्ष्म्रीं कौलिनीवाग्देवतायै नमः मूलाधारे।

ततः पद्मनिभां देवीं बालार्ककिरणारुणाम्।
जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम्।।११३।।

पद्मरागप्रतीकाशां कुंकुमोदकसन्निभाम्।
स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम्।।११४।।
कालालिकुलसंकाशकुटिलालकपल्लवाम् ।
प्रत्यग्रारुणसंकाशवदनाम्भोजमण्डलाम् ।।११५।।
किञ्चिदर्धेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम् ।
पिनाकधनुराकारसुभ्रुवं परमेश्वरीम्।।११६।।
आनन्दमुदितोल्लोललीलान्दोलितलोचनाम्।
स्फुरन्मयूखसङ्घातविततस्वर्णकुण्डलाम्।।११७।।
सुगण्डमण्डलाभोगजितेन्द्वमृतमण्डलाम्।
विश्वकर्मादिनिर्माणसूत्रविस्पष्टनासिकाम्।।११८।।
ताम्रविद्रुमबिम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम्।
स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यरसगोचराम्।।११९।।
अनौपम्यगुणोपेतचिबुकोद्देशशोभिताम्।
कम्बुग्रीवां विशालाक्षीं मृणाललतितैर्भुजैः।।१२०।।
रक्तोत्पलसमाकारसुकुमारकराम्बुजाम्।
कराम्बुजनखद्योतवितानितनभस्थलाम्।।१२१।।
मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम्।
त्रिवलीवलनायुक्तमध्यदेशसुशोभिताम्।।१२२।।
लावण्यसरिदावताकारनाभिविभूषिताम्।
अनर्घ्यरत्नघटितकाञ्चीयुक्तनितम्बिनीम्।।१२३।।
नितम्बबिम्बद्विरदरोमराज्यपरांकुशाम्।
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम्।।१२४।।
लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम्।
नमद्ब्रह्मशिरोरत्ननिर्घृष्टचरणाम्बुजाम्।।१२५।।
शीतांशुशतसंकाशकान्तिसन्तानहासिनीम्।
लौहित्यजितसिन्दूरजपादाडिमरागिणीम्।।१२६।।
रक्तवस्त्रपरीधानां पाशांकुशकरोद्यताम्।
रक्तपद्मनिविष्टां तु रक्ताभरणमण्डिताम्।।१२७।।
चतुर्भुजां त्रिनयनां पञ्चबाणधनुर्धराम्।
कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलापूरिताननाम्।।१२८।।

महामृगमदोद्दामकुंकुमारुणविग्रहाम्।
सर्वश्रृङ्गारवेषाढ्यां सर्वालंकारभूषिताम्।।१२९।।
जगदाह्लादजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम्।
जगदाकर्षणकरीं जगत्कारणरूपिणीम्।।१३०।।
सर्वमन्त्रमयीं देवीं सर्वसौभाग्यसुन्दरीम्।
सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां परमानन्दनन्दिताम्।।१३१।।

ये श्लोक महादेवी महात्रिपुरसुन्दरी के ध्यान मन्त्र हैं।

देवी लाल कमल के समान नवोदित सूर्य की लाल किरणों के समान लाल वर्ण की हैं। अड़हूल के फूल के समान, अनार के फूल के समान, पद्मराग के समान और जल में कुंकुम घोल के समान श्रीदेवी का वर्ण है। शिर पर माणिक का मुकुट है, जिसमें सभी ओर से छोटी-छोटी घण्टियों के किंकिणी जाल लगे हुए हैं। उनके केश काले भ्रमरों के वर्ण के घुंघराले हैं। उनका मुख मण्डल प्रत्यग अरुण कमल के समान है।

कुटिल ललाट पर अर्द्धचन्द्र की मृदुल पट्टी है। परमेश्वरी की भृकुटियाँ पिनाक धनुष के आकार की सुन्दर हैं। आनन्द मुदित उल्लोल लीला से आन्दोलित नयन हैं। कानों के स्वर्ण कुण्डलों के लोल से किरणों का जाल निकल रहा है। सुन्दर कपोल मण्डल अमृत मण्डल को परास्त कर रहे हैं। विश्वकर्मा के निर्माण सूत्र के समान स्पष्ट नासिका है। ताँबा, मूंगा बिम्ब की आभा के समान लाल ओठ अमृतोपम हैं। स्मिति मुस्कान के माधुर्य गोचर मधुर रस से भी श्रेष्ठ हैं। अनुपम गुणों से युक्त चिबुक मण्डल शोभायमान है।

उनकी ग्रीवा शंख के समान है। आँखें बड़ी-बड़ी हैं। मृणालक समान ललित भुजाएँ हैं। लाल कमल के आकार के समान सुकुमार करकमल हैं। करकमल के नख आकाश में खद्योत वितान के समान हैं। मोतियों के हार लता से युक्त उन्नत स्तन मण्डल हैं। त्रिवली वलना से युक्त मध्य देश सुशोभित हैं। लावण्य सरिता के आकार की नाभि से विभूषित हैं। अनमोल रत्नों से निर्मित कांची साड़ी से युक्त नितम्ब हैं। नितम्ब बिम्ब द्विरद रोग राजि से किरणें विकीर्ण हैं। सुन्दर केले के स्तम्भ के समान ईश्वरी के उरू हैं। सुन्दर केले के स्तम्भ के समान दोनों जंघा हैं। प्रणाम करते हुए देवताओं के शिरोरत्न से निर्धृष्ट चरणकमल हैं। सौ चन्द्रमाओं के समान कान्ति सन्तान के समान उनकी हँसी है। लौहित्यजित सिन्दूर अड़हूल फूल अनार की प्रेमिका हैं। रक्त वस्त्रपरिधान है। हाथों में पाश और अंकुश है। लाल कमल पर आसीन है। लाल आभरणों से

मण्डित हैं। चार भुजाओं और तीन नयनों वाली पाँच बाण और धनुष धारिणी हैं। कपूर चूर्ण मिश्रित पान से उनका मुख पूर्ण है। महामृगमद कस्तूरी कुंकुम के समान श्री विग्रह है। सभी शृङ्गार वेश से आढ्य हैं। सभी अलंकारों से भूषित हैं। जगत को आह्लादित करने वाली जननी है। संसार को आनन्दित करने वाली हैं। जगत को आकर्षित करने वाली जगत कारण स्वरूपा हैं। महादेवी सर्वमन्त्रमयी सर्वसौभाग्यवर्धिनी हैं। सर्वलक्ष्मीमयी नित्या परम आनन्द से आनन्दित हैं। मौलिक ग्रन्थ के श्लोकों के अनुसार पूजन विधि संक्षिप्त है। इसके टीकाकार जयरथ के अनुसार श्रीयन्त्र पूजन निम्न प्रकार का होता है। यही विधि तन्त्रराज और श्रीविद्यार्णव आदि ग्रन्थों में मान्य है।

महात्रिपुरमुद्रां तु स्मृत्वाऽऽवाहनरूपया।
विद्ययाऽऽवाह्य सुभगे नमस्कारनियुक्तया।।१३२।।
पूर्वोक्तया साधकेन्द्रो महात्रिपुरसुन्दरीम्।
चक्रमध्ये तु संचिन्त्य ततः पूजनमारभेत्।।१३३।।

त्रिखण्डा मुद्रा दिखाकर महात्रिपुरसुन्दरी विद्या 'क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं' से आवाहन करके नमस्कार करें। चक्रमध्य बिन्दु चक्र में पूर्वोक्त रूप के देवी का चिन्तन करके पूजन प्रारम्भ करें।

शिवाग्निबिन्दवो देवि दिनकृद्वह्निबिन्दवः।
युगपत्क्रमरूपेण योजनीया महेश्वरि।।१३४।।
मायार्धेन्दुसमायुक्तं बीजयुग्मं यदुत्थितम्।
मायालक्ष्मीमयं तेन पूज्यास्तत्राष्टमातरः।।१३५।।

प्रत्येक पूजन मन्त्र के पहले 'ह्रीं श्रीं' लगावें। शिव 'ह', अग्नि 'र', माया 'ई' और बिन्दु के योग 'ह्रीं' बनता है। दिनकृत 'श', वह्नि 'र', माया 'ई' और बिन्दु के योग से 'श्रीं' बनता है। 'ह्रीं श्रीं' माया लक्ष्मीमय है। युगपत क्रम से इन्हें प्रत्येक पूजन मन्त्र के पहले लगावें। पहले अष्टमातृका ब्रह्मी आदि पूजन भूपुर के द्वारों में और कोनों में करें।

ब्रह्माणी पश्चिमद्वारे माहेश्वर्यपि चोत्तरे।
पूर्वे चैव तथेन्द्राणी कौमारी दक्षिणे तथा।।१३६।।
वैष्णव्यपि च वायव्ये वाराहीमीशदिग्गताम्।
चामुण्डां देवि चाग्नेये महालक्ष्मीं तु नैर्ऋते।।१३७।।

प्रथम आवरण

'ह्रीं श्रीं त्रैलोक्य मोहन चक्राय नमः' से पुष्पाञ्जलि देवें। यह कार्य भपुर की रेखा में क्रमांक के अनुसार करें।
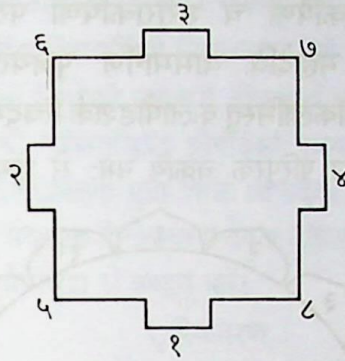
१. ह्रीं श्रीं ब्राह्मीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः पश्चिम द्वार में।

२. ह्रीं श्रीं माहेश्वरीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः उत्तर द्वार में।

३. ह्रीं श्रीं इन्द्राणीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः पूर्व द्वार में।

४. ह्रीं श्रीं कौमारीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः दक्षिण द्वार में।

५. ह्रीं श्रीं वैष्णवीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः वायव्य दिशा में।

६. ह्रीं श्रीं वाराहीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः ईशान दिशा में।

७. ह्रीं श्रीं चामुण्डामातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः आग्नेय दिशा में।

८. ह्रीं श्रीं महालक्ष्मीमातृ श्रीपादुकां पूजयामि नमः नैर्ऋत्य दिशा में।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं अणिमा सिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

सर्व संक्षोभिणी मुद्रा शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

प्रकट योगिनी मयूखायै प्रथमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

द्वितीयावरण षोडशार में पूजा करें।

कामाकर्षणरूपां च बुद्ध्याकर्षस्वरूपिणी।
अहंकाराकर्षिणीं च शब्दाकर्षणस्वरूपिणी।।१३८।।
स्पर्शाकर्षणरूपां च रूपाकर्षणकारिणी।
रसाकर्षणकरी देवी गन्धाकर्षकरी तथा।।१३९।।

चित्ताकर्षणरूप च धैर्याकर्षस्वरूपिणी।
स्मृत्याकर्षणरूपा च नामाकर्षणकारिणी।।१४०।।
बीजाकर्षणरूपान्या आत्माकर्षस्वरूपिणी।
अमृतस्याकर्षिणी च शरीराकर्षिणी परा।।१४१।।
षोडशारे महादेवि वाममार्गेण पूजयेत्।
मायालक्ष्मीकलाभिस्तु कलाषोडशकं त्विदम्।।१४२।।

ह्रीं श्रीं सर्वाशा परिपूरक चक्राय नमः से पुष्पांजलि देकर पूजा करें।
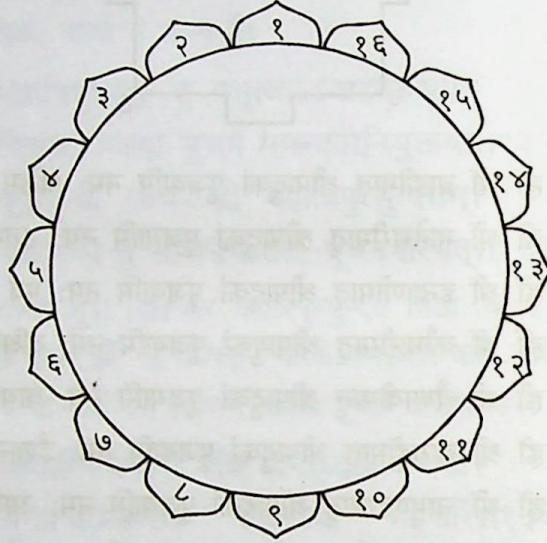
१. ह्रीं श्रीं कामाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
२. ह्रीं श्रीं बुद्ध्याकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
३. ह्रीं श्रीं अहङ्काराकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
४. ह्रीं श्रीं शब्दाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
५. ह्रीं श्रीं स्पर्शाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
६. ह्रीं श्रीं रूपाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
७. ह्रीं श्रीं रसाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
८. ह्रीं श्रीं गन्धाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
९. ह्रीं श्रीं चित्ताकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
१०. ह्रीं श्रीं धैर्याकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
११. ह्रीं श्रीं स्मृत्याकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१२. ह्रीं श्रीं नामाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१३. ह्रीं श्रीं बीजाकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१४. ह्रीं श्रीं आत्माकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१५. ह्रीं श्रीं अमृताकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१६. ह्रीं श्रीं शरीराकर्षिणी नित्याकला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरेशी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं लघिमासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणी मुद्रा शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

गुप्तयोगिनी मयूखाय द्वितीयावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकाये नमः योनिमुद्रा से प्रणाम करें।

तृतीयावरण

अनङ्गकुसुमां पूर्वे दक्षिणेऽनङ्गमेखलाम्।
पश्चिमेऽनङ्गमथनामुत्तरे दमनोत्तरम्।।१४३।।
अनङ्गलेखामाग्नेये नैर्ऋतेऽनङ्गवासिनीम्।
अनङ्गांकुशां वायव्य ईशानेऽनङ्गमालिनीम्।।१४४।।

ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभण चक्राय नमः कहकर पुष्पाञ्जलि देवें। चक्रांकित क्रमांक के अनुसार पूजा करें।
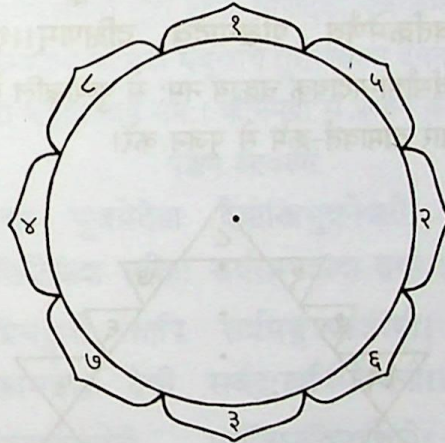
१. ह्रीं श्रीं अनङ्गकुसुमा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं अनङ्गमेखला देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं अनङ्गमदना देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनातुरा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

५. ह्रीं श्रीं अनङ्गरेखा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

६. ह्रीं श्रीं अनङ्गवेगिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

७. ह्रीं श्रीं अनङ्गाङ्कुशा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

८. ह्रीं श्रीं अनङ्गमालिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं महिमासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

सर्वाकर्षिणी मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं गुप्ततर योगिनी मयूखायै तृतीया वरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनिमुद्रा से प्रणाम करें।

चतुर्थ आवरण

सर्वसंक्षोभिणी शक्ति सर्वविद्रावणी तथा।
सर्वाकर्षणकरी चान्या सर्वाह्लादनकरी तथा।।१४५।।
सर्वसम्मोहिनीं शक्तिं सर्वस्तम्भनरूपिणीम्।
सर्वजम्भनरूपा च सर्ववशङ्करीम्।।१४६।।
सर्वरञ्जनशक्तिं च सर्वोन्मादनरूपिणीम्।
सर्वार्थसाधकी शक्तिः सर्वाशापरिपूरकी।।१४७।।
सर्वमन्त्रमयी देवी सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी।
वामावर्तक्रमेणैव पश्चिमादेव दक्षिणम्।।१४८।।

ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायक चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि देवें। निम्नांकित चक्र में क्रमांक के अनुसार वामावर्त-क्रम से पूजन करें।
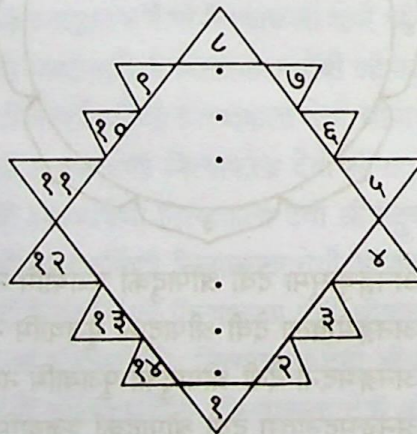
ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभिणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वाकर्षिणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वाह्लादिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वसम्मोहिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वस्तम्भिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वजृम्भिणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्ववशङ्करीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वरञ्जिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वोन्मादिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वार्थसाधिनीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वसंपत्तिपूरणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वमन्त्रमयीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरवासिनी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं ईशित्वसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्ववशंकरी मुद्रा शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सम्प्रदाय योगिनी मयूखायै तुरीयावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी परा भट्टारिकायै नमः। योनिमुद्रा से प्रणाम करें।

पञ्चम आवरण

गृहीत्वा पूजयेदेता देवीस्त्रिभुवनेश्वरीः।
सर्वसिद्धिप्रदा शक्तिः सर्वसम्पत्प्रदा तथा।।१४९।।

सर्वप्रियङ्करी चापि सर्वमङ्गलकारिणी।
सर्वकामप्रदा देवी सर्वदुःखविमोचिनी।।१५०।।

सर्वमृत्युप्रशमनी सर्वविघ्नविनाशिनी।
सर्वाङ्गसुन्दरी देवी सर्वसौभाग्यकारिणी।।१५१।।

ह्रीं श्रीं सर्वार्थ साधक चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें। निम्नांकित चक्र क्रमांक वामावर्त क्रम से पूजन करें।
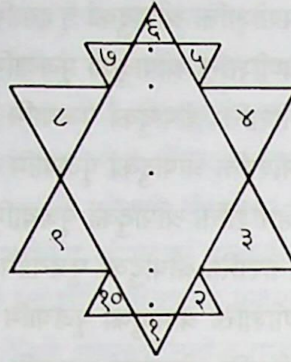
१. ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं सर्वसंपत्प्रदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सर्वप्रियङ्करी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं सर्वमङ्गलकारिणी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

५. ह्रीं श्रीं सर्वकामप्रदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

६. ह्रीं श्रीं सर्वदुःखविमोचिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

७. ह्रीं श्रीं सर्वमृत्युप्रशमनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

८. ह्रीं श्रीं सर्वविघ्ननिवारणी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

९. ह्रीं श्रीं सर्वाङ्गसुन्दरी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१०. ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरा श्रीचक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं वशित्वसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्री सवान्मादिनी मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं कुलोत्तीर्ण योगिनी मयूखायैः पंचामावरणदेवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

षष्ठ आवरण

तथैव देवदेवेशि पुनरेवाद्यविद्यया।
द्वितीयावरणे देवि देवीदशकमर्चयेत्।।१५२।।

सर्वज्ञा सर्वशक्तिश्च सर्वैश्वर्यप्रदायिनी।
सर्वज्ञानमयी देवी सर्वव्याधिविनाशिनी।।१५३।।

सर्वाधारस्वरूपा च सर्वपापहरा तथा।
सर्वानन्दमयी देवी सर्वरक्षास्वरूपिणी।।१५४।।

पुनरेव महेशानि सर्वेप्सितफलप्रदा।
दशमी देवता ख्याताः स्वनामसदृशोदयाः।।१५५।।
एवमेता महादेव्यो देवि सर्वार्थसिद्धिदाः।
पूर्वोक्तेन विधानेन तृतीयावरणेऽर्चयेत्।।१५६।।

ह्रीं श्रीं सर्वरक्षाकर चक्राय नमः से पुष्पांञ्जलि प्रदान करें। चक्रांकित क्रमांक के अनुसार वामावर्त क्रम से पूजन करें।
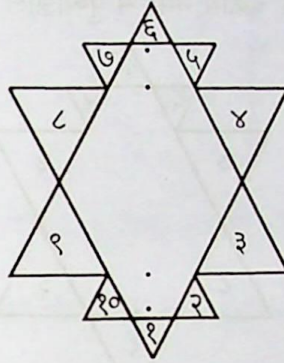
१. ह्रीं श्रीं सर्वज्ञा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
२. ह्रीं श्रीं सर्वशक्ति देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
३. ह्रीं श्रीं सर्वैश्वर्यप्रदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
४. ह्रीं श्रीं सर्वज्ञानमयी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
५. ह्रीं श्रीं सर्वव्याधिविनाशिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
६. ह्रीं श्रीं सर्वाधारस्वरूपा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
७. ह्रीं श्रीं सर्वपापहरा देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
८. ह्रीं श्रीं सर्वानन्दमयी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
९. ह्रीं श्रीं सर्वरक्षास्वरूपिणी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
१०. ह्रीं श्रीं सर्वव्याधिविनाशिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरमालिनी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वमहांकुशामुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

निगर्भ योगिनी मयूखायै षष्ठावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करे।

सप्तम आवरण

आद्यचक्रे महेशानि शृणु पूजां यथाक्रमम्।
एकैकं देवतानाम पूर्वोक्तं बीजसंयुतम्।।१५७।।
अधस्ताद्देवदेवेशि वाममार्गेण पूजयेत्।
यावद्दक्षिणमार्गं तु रक्तपुष्पैर्महेश्वरि।।१५८।।

दक्षिणमार्गी लाल फूलों से पूजा चक्रांकित क्रमानुसार वामावर्त से करें। ह्रीं श्रीं सर्वरोगहर चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें।
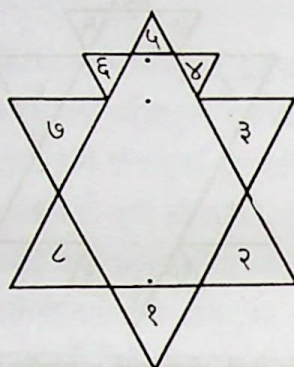
१. ह्रीं श्रीं ब्लूं वशिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
२. ह्रीं श्रीं क्ल्हीं कामेश्वरी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
३. ह्रीं श्रीं न्ब्लीं मोदिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
४. ह्रीं श्रीं प्लूं विमला वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
५. ह्रीं श्रीं ज्म्रीं अरुणा वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
६. ह्रीं श्रीं ह्स्ल्व्यूं जयिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
७. ह्रीं श्रीं झ्म्र्यूं सर्वेश्वरी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
८. ह्रीं श्रीं क्ष्म्रीं कौलिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुरासिद्धा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं मुक्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वखेचरी मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं रहस्ययोगिनी मयूखायै सप्तमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टरिकायै नमः।

अष्टम आवरण

पश्चिमोत्तरपूर्वादिदक्षिणानुक्रमेण तु।
चक्रमध्ये चतुष्कं तु क्रमेण परिपूजयेत्।।१५९।।

कामबाणान्महेशानि धनुस्तत्पाशमेव च।
जम्भमोहवशस्तम्भपदैः सहितमंकुशम्।।१६०।।

त्रिकोण के बाहर चारों दिशाओं में प्रदक्षिणा क्रम से आयुधों की पूजा अंकित क्रमांक के अनुसार करें।
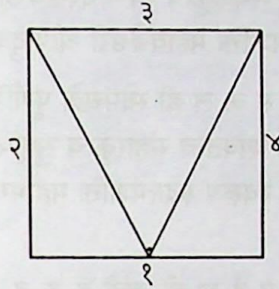
१. ह्रीं श्रीं सर्वजृम्भणेभ्यः कामेश्वरी कामेश्वर बाणशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं सर्वसंमोहनाभ्यां कामेश्वरी कामेश्वर धनुशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सर्ववशीकरणाय कामेश्वरी कामेश्वर पाशशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं सर्वस्तम्भनाभ्याः कामेश्वरी कामेश्वर अङ्कुशशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

सर्वमध्य त्रिकोणेऽपि पूजयेन्मूलविद्यया।
केवलाक्षरभेदेन समस्तव्यस्तयेश्वरि।।१६१।।
कामेश्वरीमग्रकोणे वज्रेशीं दक्षिणे तथा।
वामेऽपि भगमालां तु मध्ये त्रिपुरसुन्दरीम्।।१६२।।

सबके बीच वाले त्रिकोण के अग्र दक्ष वाम कोणों और बिन्दु में पूजा अंकित क्रमांक के अनुसार करें। ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रद चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि देवें।

१. ह्रीं श्रीं ऐं क ए ई ल ह्रीं अग्नि चक्रे कामगिरिपीठ मित्रेशनाथ नवयोनिचक्रात्मक आत्मतत्त्व सृष्टिकृत्य जाग्रत् दशाधिष्ठायक इच्छाशक्ति वाग्भवात्मक वागीश्वरी स्वरूप ब्रह्मात्मशक्ति महाकामेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथ दशारद्वय चतुर्दशार चक्रात्मक विद्यातत्त्व स्थितिकृत्य स्वप्न दशाधिष्ठायक ज्ञानशक्ति कामराजात्मक कामकला स्वरूपे विष्णरात्मशक्ति महावज्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सौः ह स क ल ह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरीपीठे उड्डीशनाथ अष्टदल षोडशदल चतुरस्र चक्रात्मक शिवतत्त्व संहारकृत्य सुषुप्ति दशाधिष्ठायक क्रियाशक्ति शक्ति बीजात्मक परापरशक्ति स्वरूप रुद्रात्मशक्ति महाभगमालिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं ऐ क ए ई ल ह्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सौः ह स क ल ह्रीं परब्रह्मचक्र महोड्याणपीठे चर्यानन्दनाथ समस्त चक्रात्मक सपरिवार परमतत्त्व सृष्टि स्थिति संहारकृत्य तुरीय दशाधिष्ठयक इच्छाज्ञानक्रिया शान्ताशक्ति वाग्भवकामराज शक्ति बीजात्मक परमशक्ति स्वरूप परब्रह्मात्मशक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुराम्बा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वबीजामुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं अतिरहस्य योगिनि मयूखायै अष्टमावरणदेवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

नवमावरण

सर्वमध्य त्रिकोण के बिन्दु चक्र में पूजा करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं सर्वानन्दमय चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिका श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः तीन बार तर्पण करें।

ह्रीं श्रीं पंचदशी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वयोनि मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं परापरा अतिरहस्य योगिनी मयूखायै नवमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

एवं पूजाविधानं तु कृत्वादौ साधकोत्तमः।
धूपगन्धादि नैवेद्यतर्पणादि निवेदयेत्।।१६३।।

इस प्रकार की पूजा पहले करने के बाद साधक श्रेष्ठ गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करके तर्पण करे।

संक्षोभद्रावणाकर्षविशोन्मादमहांकुशाः।
खेचरीबीजरूपादियोनिमुद्रास्त्वनुक्रमात्।।१६४।।

इसके बाद संक्षोभ, द्रावन, आकर्षण, आवेश, उन्माद, महांकुशा, खेचरी, बीज और योनि नव मुद्राओं को प्रदर्शित करें।

विरच्य साधकेन्द्रस्तु ध्यानं कुर्यात्समाहितः।
बिन्दुं सङ्कल्प्य वक्त्रं तु तदधस्तात्कुचद्वयम्।।१६५।।
तदधः सपरार्धं तु चिन्तयेत्तदधोमुखम्।
एवं कामकलारूपमक्षरं यत्समुत्थितम्।।१६६।।
कामादिविषमोक्षाणामालयं परमं ध्रुवम्।
तदेव तत्त्वप्रवरं निजदेहं विचिन्तयेत्।।१६७।।
ध्यात्वा चक्रेण सहितां ततस्त्रिपुरसुन्दरीम्।
स्वमुद्रया साधकेन्द्रः क्षमस्वेति विसर्जयेत्।।१६८।।

मुद्रा दिखाने के बाद साधकेन्द्र समाहित होकर कामकला का ध्यान करे। एक बिन्दु मुख है। दो स्तन दो बिन्दु हैं। इनके नीचे परार्द्धकला है। अधोमुख त्रिकोण का चिन्तन करें। यह कामकला रूप है। जिससे अक्षर उत्पन्न होते हैं। यह काम आदि विषमोक्षण का आगार परमध्रुव है। सभी तत्त्वों से युक्त अपने शरीर का चिन्तन करे। चक्ररूप में त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करके स्वमुद्रा से क्षमा मांगकर विसर्जन करें।

।।वामकेश्वरीमतम् का प्रथम पटल सम्पूर्ण।।

❖❖❖

१. ह्रीं श्रीं ऐं क ए ई ल ह्रीं अग्नि चक्रे कामगिरिपीठ मित्रेशनाथ नवयोनिचक्रात्मक आत्मतत्त्व सृष्टिकृत्य जाग्रत् दशाधिष्ठायक इच्छाशक्ति वाग्भवात्मक वागीश्वरी स्वरूप ब्रह्मात्मशक्ति महाकामेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथ दशारद्वय चतुर्दशार चक्रात्मक विद्यातत्त्व स्थितिकृत्य स्वप्न दशाधिष्ठायक ज्ञानशक्ति कामराजात्मक कामकला स्वरूपे विष्णरात्मशक्ति महावज्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सौः ह स क ल ह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरीपीठे उड्डीशनाथ अष्टदल षोडशदल चतुरस्त्र चक्रात्मक शिवतत्त्व संहारकृत्य सुषुप्ति दशाधिष्ठायक क्रियाशक्ति शक्ति बीजात्मक परापरशक्ति स्वरूप रुद्रात्मशक्ति महाभगमालिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं ऐ क ए ई ल ह्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सौः ह स क ल ह्रीं परब्रह्मचक्र महोड्याणपीठे चर्यानन्दनाथ समस्त चक्रात्मक सपरिवार परमतत्त्व सृष्टि स्थिति संहारकृत्य तुरीय दशाधिष्ठयक इच्छाज्ञानक्रिया शान्ताशक्ति वाग्भवकामराज शक्ति बीजात्मक परमशक्ति स्वरूप परब्रह्मात्मशक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुराम्बा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वबीजामुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं अतिरहस्य योगिनि मयूखायै अष्टमावरणदेवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

नवमावरण

सर्वमध्य त्रिकोण के बिन्दु चक्र में पूजा करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं सर्वानन्दमय चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिका श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः तीन बार तर्पण करें।

ह्रीं श्रीं पंचदशी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वयोनि मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं परापरा अतिरहस्य योगिनी मयूखायै नवमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

एवं पूजाविधानं तु कृत्वादौ साधकोत्तमः।
धूपगन्धादि नैवेद्यतर्पणादि निवेदयेत्॥१६३॥

इस प्रकार की पूजा पहले करने के बाद साधक श्रेष्ठ गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करके तर्पण करे।

संक्षोभद्रावणाकर्षावेशोन्मादमहांकुशाः।
खेचरीबीजरूपादियोनिमुद्रास्त्वनुक्रमात्॥१६४॥

इसके बाद संक्षोभ, द्रावन, आकर्षण, आवेश, उन्माद, महांकुशा, खेचरी, बीज और योनि नव मुद्राओं को प्रदर्शित करें।

विरच्य साधकेन्द्रस्तु ध्यानं कुर्यात्समाहितः।
बिन्दुं सङ्कल्प्य वक्त्रं तु तदधस्तात्कुचद्वयम्॥१६५॥
तदधः सपरार्धं तु चिन्तयेत्तदधोमुखम्।
एवं कामकलारूपमक्षरं यत्समुत्थितम्॥१६६॥
कामादिविषमोक्षाणामालयं परमं ध्रुवम्।
तदेव तत्त्वप्रवरं निजदेहं विचिन्तयेत्॥१६७॥
ध्यात्वा चक्रेण सहितां ततस्त्रिपुरसुन्दरीम्।
स्वमुद्रया साधकेन्द्रः क्षमस्वेति विसर्जयेत्॥१६८॥

मुद्रा दिखाने के बाद साधकेन्द्र समाहित होकर कामकला का ध्यान करे। एक बिन्दु मुख है। दो स्तन दो बिन्दु हैं। इनके नीचे परार्द्धकला है। अधोमुख त्रिकोण का चिन्तन करें। यह कामकला रूप है। जिससे अक्षर उत्पन्न होते हैं। यह काम आदि विषमोक्षण का आगार परमध्रुव है। सभी तत्त्वों से युक्त अपने शरीर का चिन्तन करे। चक्ररूप में त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करके स्वमुद्रा से क्षमा मांगकर विसर्जन करें।

॥वामकेश्वरीमतम् का प्रथम पटल सम्पूर्ण॥

❖❖❖

१. ह्रीं श्रीं ऐं क ए ई ल ह्रीं अग्नि चक्रे कामगिरिपीठ मित्रेशनाथ नवयोनिचक्रात्मक आत्मतत्त्व सृष्टिकृत्य जाग्रत् दशाधिष्ठायक इच्छाशक्ति वाग्भवात्मक वागीश्वरी स्वरूप ब्रह्मात्मशक्ति महाकामेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथ दशारद्वय चतुर्दशार चक्रात्मक विद्यातत्त्व स्थितिकृत्य स्वप्न दशाधिष्ठायक ज्ञानशक्ति कामराजात्मक कामकला स्वरूपे विष्णरात्मशक्ति महावज्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सौः ह स क ल ह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरीपीठे उड्डीशनाथ अष्टदल षोडशदल चतुरस्र चक्रात्मक शिवतत्त्व संहारकृत्य सुषुप्ति दशाधिष्ठायक क्रियाशक्ति शक्ति बीजात्मक परापरशक्ति स्वरूप रुद्रात्मशक्ति महाभगमालिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं ऐ क ए ई ल ह्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सौः ह स क ल ह्रीं परब्रह्मचक्र महोड्याणपीठे चर्यानन्दनाथ समस्त चक्रात्मक सपरिवार परमतत्त्व सृष्टि स्थिति संहारकृत्य तुरीय दशाधिष्ठयक इच्छाज्ञानक्रिया शान्ताशक्ति वाग्भवकामराज शक्ति बीजात्मक परमशक्ति स्वरूप परब्रह्मात्मशक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुराम्बा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वबीजामुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं अतिरहस्य योगिनि मयूखायै अष्टमावरणदेवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

नवमावरण

सर्वमध्य त्रिकोण के बिन्दु चक्र में पूजा करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं सर्वानन्दमय चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिका श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः तीन बार तर्पण करें।

ह्रीं श्रीं पंचदशी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वयोनि मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं परापरा अतिरहस्य योगिनी मयूखायै नवमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

एवं पूजाविधानं तु कृत्वादौ साधकोत्तमः।
धूपगन्धादि नैवेद्यतर्पणादि निवेदयेत्।।१६३।।

इस प्रकार की पूजा पहले करने के बाद साधक श्रेष्ठ गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करके तर्पण करे।

संक्षोभद्रावणाकर्षविशोन्मादमहांकुशाः।
खेचरीबीजरूपादियोनिमुद्रास्त्वनुक्रमात्।।१६४।।

इसके बाद संक्षोभ, द्रावन, आकर्षण, आवेश, उन्माद, महांकुशा, खेचरी, बीज और योनि नव मुद्राओं को प्रदर्शित करें।

विरच्य साधकेन्द्रस्तु ध्यानं कुर्यात्समाहितः।
बिन्दुं सङ्कल्प्य वक्त्रं तु तदधस्तात्कुचद्वयम्।।१६५।।
तदधः सपरार्धं तु चिन्तयेत्तदधोमुखम्।
एवं कामकलारूपमक्षरं यत्समुत्थितम्।।१६६।।
कामादिविषमोक्षाणामालयं परमं ध्रुवम्।
तदेव तत्त्वप्रवरं निजदेहं विचिन्तयेत्।।१६७।।
ध्यात्वा चक्रेण सहितां ततस्त्रिपुरसुन्दरीम्।
स्वमुद्रया साधकेन्द्रः क्षमस्वेति विसर्जयेत्।।१६८।।

मुद्रा दिखाने के बाद साधकेन्द्र समाहित होकर कामकला का ध्यान करे। एक बिन्दु मुख है। दो स्तन दो बिन्दु हैं। इनके नीचे परार्द्धकला है। अधोमुख त्रिकोण का चिन्तन करें। यह कामकला रूप है। जिससे अक्षर उत्पन्न होते हैं। यह काम आदि विषमोक्षण का आगार परमध्रुव है। सभी तत्त्वों से युक्त अपने शरीर का चिन्तन करे। चक्ररूप में त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करके स्वमुद्रा से क्षमा मांगकर विसर्जन करें।

।।वामकेश्वरीमतम् का प्रथम पटल सम्पूर्ण।।

❖❖❖

१. ह्रीं श्रीं ऐं क ए ई ल ह्रीं अग्नि चक्रे कामगिरिपीठ मित्रेशनाथ नवयोनिचक्रात्मक आत्मतत्त्व सृष्टिकृत्य जाग्रत् दशाधिष्ठायक इच्छाशक्ति वाग्भवात्मक वागीश्वरी स्वरूप ब्रह्मात्मशक्ति महाकामेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

२. ह्रीं श्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथ दशारद्वय चतुर्दशार चक्रात्मक विद्यातत्त्व स्थितिकृत्य स्वप्न दशाधिष्ठायक ज्ञानशक्ति कामराजात्मक कामकला स्वरूपे विष्णरात्मशक्ति महावज्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

३. ह्रीं श्रीं सौः ह स क ल ह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरीपीठे उड्डीशनाथ अष्टदल षोडशदल चतुरस्र चक्रात्मक शिवतत्त्व संहारकृत्य सुषुप्ति दशाधिष्ठायक क्रियाशक्ति शक्ति बीजात्मक परापरशक्ति स्वरूप रुद्रात्मशक्ति महाभगमालिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

४. ह्रीं श्रीं ऐ क ए ई ल ह्रीं क्लीं ह क ह ल ह्रीं सौः ह स क ल ह्रीं परब्रह्मचक्र महोड्याणपीठे चर्यानन्दनाथ समस्त चक्रात्मक सपरिवार परमतत्त्व सृष्टि स्थिति संहारकृत्य तुरीय दशाधिष्ठयक इच्छाज्ञानक्रिया शान्ताशक्ति वाग्भवकामराज शक्ति बीजात्मक परमशक्ति स्वरूप परब्रह्मात्मशक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं त्रिपुराम्बा चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।
ह्रीं श्रीं सर्वबीजामुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं अतिरहस्य योगिनि मयूखायै अष्टमावरणदेवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

नवमावरण

सर्वमध्य त्रिकोण के बिन्दु चक्र में पूजा करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं सर्वानन्दमय चक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करें।

ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिका श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः तीन बार तर्पण करें।

ह्रीं श्रीं पंचदशी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं सर्वयोनि मुद्राशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ह्रीं श्रीं परापरा अतिरहस्य योगिनी मयूखायै नवमावरण देवता सहितायै श्रीललिता महात्रिपुरसुन्दरी पराभट्टारिकायै नमः। योनि मुद्रा से प्रणाम करें।

एवं पूजाविधानं तु कृत्वादौ साधकोत्तमः।
धूपगन्धादि नैवेद्यतर्पणादि निवेदयेत्।।१६३।।

इस प्रकार की पूजा पहले करने के बाद साधक श्रेष्ठ गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करके तर्पण करे।

संक्षोभद्रावणाकर्षावेशोन्मादमहांकुशाः।
खेचरीबीजरूपादियोनिमुद्रास्त्वनुक्रमात्।।१६४।।

इसके बाद संक्षोभ, द्रावन, आकर्षण, आवेश, उन्माद, महांकुशा, खेचरी, बीज और योनि नव मुद्राओं को प्रदर्शित करें।

विरच्य साधकेन्द्रस्तु ध्यानं कुर्यात्समाहितः।
बिन्दुं सङ्कल्प्य वक्त्रं तु तदधस्तात्कुचद्वयम्।।१६५।।
तदधः सपरार्धं तु चिन्तयेत्तदधोमुखम्।
एवं कामकलारूपमक्षरं यत्समुत्थितम्।।१६६।।
कामादिविषमोक्षाणामालयं परमं ध्रुवम्।
तदेव तत्त्वप्रवरं निजदेहं विचिन्तयेत्।।१६७।।
ध्यात्वा चक्रेण सहितां ततस्त्रिपुरसुन्दरीम्।
स्वमुद्रया साधकेन्द्रः क्षमस्वेति विसर्जयेत्।।१६८।।

मुद्रा दिखाने के बाद साधकेन्द्र समाहित होकर कामकला का ध्यान करे। एक बिन्दु मुख है। दो स्तन दो बिन्दु हैं। इनके नीचे परार्द्धकला है। अधोमुख त्रिकोण का चिन्तन करें। यह कामकला रूप है। जिससे अक्षर उत्पन्न होते हैं। यह काम आदि विषमोक्षण का आगार परमध्रुव है। सभी तत्त्वों से युक्त अपने शरीर का चिन्तन करे। चक्ररूप में त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करके स्वमुद्रा से क्षमा मांगकर विसर्जन करें।

।।वामकेश्वरीमतम् का प्रथम पटल सम्पूर्ण।।

❖❖❖

द्वितीयः पटलः

यत्रानेन विधानेन साधकेन प्रपूज्यते।
देशे वा नगरे ग्रामे जगत्क्षोभः प्रजायते।।१।।

जिस देश, नगर या ग्राम में साधक इस विधान से पूजा करता है, उस देश, नगर, ग्राम के साथ संसार में विक्षोभ उत्पन्न हो जाता है। (Exitment) हो जाता है।

ज्वलत्कामाग्निसन्तापप्रतापोत्तप्तमानसाः।
पिपीलिकास्थिन्यायेन दूरादायान्ति योषितः।।२।।

पिपीलिका हड्डी के चूर्ण से पूजा करने पर कामानल से संतप्त हृदय की युवतियाँ दूर से साधक के पास आती हैं।

मन्त्रसम्मूढहृदयाः स्फुरज्जघनमण्डलाः।
तद्दर्शनान्महादेवि जायन्ते सर्वयोषितः।।३।।

साधक को महादेवी के स्वरूप में देखकर स्त्रियाँ मन्त्र के प्रभाव से सम्मूढ हृदय होकर आ जाती हैं। उनकी जाँघें और नितम्ब फड़कने लगते हैं। वे वशीभूत हो जाती हैं।

जप्ते लक्षैकमात्रे तु क्षुभ्यन्ते भूतलाङ्गनाः।
यदि न क्षुभ्यतीत्थं हि साधकस्य मनो मनाक्।।४।।
संक्षुभ्यन्ति ततः सर्वाः पाताले नागकन्यकाः।

महादेवी के पंचवशी मन्त्र 'क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं' एक लाख जप से पृथ्वी पर की सभी सुन्दरियाँ क्षुब्ध हो जाती हैं। इससे यदि स्त्रियाँ तुरत क्षुब्ध नहीं होतीं, तब साधक के अगले जप से और भक्ति से क्षुब्ध हो उठती हैं। एक लाख जप के बाद जप चालू रहने पर पाताल लोक की सभी नाग कन्यायें क्षोभित हो उठती हैं।

तासामपि यदा नासौ क्षोभं याति मनागपि।।५।।
ततः स्वर्गनिवासिन्यो विद्रवन्ति सुराङ्गनाः।

एक लाख जप के बाद जप जारी रखने पर भी यदि जरा भी क्षोभ नहीं होता है, तब स्वर्ग में रहने वाली देवसुन्दरियाँ विद्रवित हो उठती हैं।

एवं लक्षत्रयं जप्त्वा व्रतस्थः साधकोत्तमः।।६।।
संक्षोभयति देवेशि त्रैलोक्यं सचराचरम्।

इस प्रकार व्रतस्थ साधक श्रेष्ठ जप जब तीन लाख हो जाता है, तब तीनों लोक चराचरों के साथ संक्षुब्ध हो उठते हैं।

लिखित्वा विपुलं चक्रं तन्मध्ये प्रतिमां यदि।।७।।
नाम्ना लिखति संयुक्तां ज्वलन्तीं चिन्तयेत्ततः।

विस्तृत चक्र बनाकर उसके बीच में इच्छित व्यक्ति की प्रतिमा बनाकर नाम लिखें। इच्छित स्त्री का कामानल से तप्त रूप का चिन्तन करें।

शतयोजनमात्रस्था त्वदृष्टापि च या भवेत्।।८।।
भयलज्जाविनिर्मुक्ता साऽप्यायाति विमोहिता।

ऐसा करने से पर्दा में सौ योजन दूर रहने वाली स्त्री भी भय, लज्जा छोड़कर विमोहित होकर साधक के पास आ जाती है।

तन्मध्यगोऽथवा भूत्वा मन्त्रं संचिन्तयेद्यदा।।९।।
सर्वमात्मानमरुणं साधमप्यरुणीकृतम्।
ततः सञ्जायते देवि सर्वसौभाग्यसुन्दरः।।१०।।
वल्लभः सर्वलोकस्य साधकः परमेश्वरि।

श्रीचक्र के केन्द्र बिन्दु में यदि साधक मन्त्र का ध्यान करता है, अपने स्वरूप का शिर से पैर तक लाल वर्ण का चिन्तन करता है और साध्य को भी लाल वर्ण का देखता है, तो वह सभी सौभाग्यों से युक्त सुन्दर हो जाता है। सभी लोकों का प्रियभाजन हो जाता है।

सर्वरक्तोपचारैस्तु पूजयेन्मुद्रया युतम्।।११।।
यस्य नाम्नैव संयुक्तं स भवेद्दासवद्वशी।

सभी लाल पूजन सामग्रियों के मुद्रायुक्त होकर, जिसे वश में करने के लिये नाम से पूजा करता है, वह दास के समान वशीभूत हो जाता है।

अदृष्टायास्तु संयोज्यं नाम चक्रस्य मध्यगम्।।१२।।
विरच्य योनिमुद्रां तु तामाकर्षयति क्षणात्।
यक्षिणीं वाऽथ गन्धर्वीं किन्नरीं वा सुरेश्वरीम्।।१३।।
सिद्धकन्यां नागकन्यां देवकन्यां च खेचरीम्।
विद्याधरीमप्सरसत्रृषिकन्यामथोर्वशीम्।।१४।।

मदनोद्भवविक्षोभस्फुरज्जघनलम्बिकाम्।

असूर्यम्पश्या स्त्री का नाम चक्र मध्य में लिखकर योनि मुद्रा प्रदर्शित करने से क्षण भर में वह आकर्षित हो जाती है। यक्षिणी, गन्धर्वी, किन्नरी, सिद्धकन्या, नागकन्या, देवकन्या, आकाशगामिनी विद्याधरी अप्सरा, ऋषिकन्या और उर्वशी भी कामानल से संतप्त फड़कते जाँघ और नितम्ब की होकर साधक के पास आ जाती है।

महाकामकलाध्यानात्क्षोभयेत्सर्वयोषितः।।१५।।
रोचनाकुंकुमाभ्यां च सप्तभागं च चन्दनम्।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तिलकं धारयेद्बुधः।।१६।।
ततो यमीक्षते वक्ति संस्पृशेच्चिन्तयेच्च यम्।
अर्थेन च शरीरेण सोऽवश्यं याति दासताम्।।१७।।

महाकामकला का ध्यान सभी स्त्रियों को संक्षुब्ध कर देता है। गोरोचन, कुंकुम और चन्दन के लेप को महादेवी के पंचदशी मन्त्र के एक सौ आठ जप से अभिमन्त्रित करके ललाट में तिलक लगाकर साधक जिसकी इच्छा करता है या स्पर्श करता है या जिसका चिन्तन करता है, वह तन, मन, धन से साधक का दास हो जाता है।

तथा पुष्पं फलं गन्धं पानं वस्त्रं महेश्वरि।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा यस्याः संप्रेर्यते स्त्रियाः।।१८।।
सद्य आकर्षयेत्साध्वीं विमूढहृदयां सतीम्।
हठाकृष्ठिरियं भद्रे न क्वचित्प्रतिहन्यते।।१९।।

फूल, फल, गन्ध, पान, वस्त्र को एक सौ आठ जप से मन्त्रित करके जिस स्त्री को देता है, वह साध्वी सती भी विमूढ हृदय होकर आकर्षित होती है। किसी पर बलपूर्वक प्रयोग न करें; अन्यथा उसका विनाश हो जाता है।

लिखेद्रोचनयैकान्ते प्रतिमामवनीतले।
सुरूपां चारुश्रृङ्गारवेशाभरणमण्डिताम्।।२०।।
तद्भालगलहृन्नाभिजन्ममण्डलयोजिताम्।
जन्मनाममहाविद्यामंकुशेन विदर्भिताम्।।२१।।
सर्वाङ्गसन्धिसंलीनमालिख्य मदनाक्षरम्।
तदाशाभिमुखो भूत्वा त्रिपुरीकृतविग्रहः।।२२।।

बद्ध्वा तु क्षोभिणीमुद्रां विद्यामष्टोत्तरशतं जपेत्।

एकान्त में भूमि पर गोरोचन से सुन्दर वेशभूषा से अलंकृत सुन्दरी की प्रतिमा बनावें। उसके ललाट, गला, हृदय, नाभि, योनि में जन्म का नाम अंकुश बीज 'क्रों' से विदर्भित महाविद्या अर्थात् देवी के पंचदशी मन्त्र को लिखें। सभी अंगों के जोड़ों में मदनाक्षर 'क्लीं' लिखें। उसके सम्मुख त्रिपुरा के समान रूप बनाकर क्षोभिणी मुद्रा बाँधकर विद्या का जप एक सौ आठ बार करें।

नियोज्य दहनागारे चन्द्रसूर्यकलालये।।२३।।
ततो विह्वलितापाङ्गामनङ्गशरपीडिताम्।
प्रोच्छालन्मदकल्लोलप्रस्फुरज्जघनस्थलाम्।।२४।।
शक्तिचक्रोच्छलच्छक्तिवलनाकवलीकृताम्।
दूरीकृतस्वचारित्रभयलज्जानयांकुशाम्।।२५।।
आकृष्टहृदयां नष्टधैर्यामुत्तीर्णजीविताम्।
वप्रप्राकारनिविडनदीयन्त्रसुरक्षिताम् ।।२६।।
नवानुरागसन्धानवेपमानहृदम्बुजाम् ।

भावना से प्रतिमा को अग्नि, चन्द्र, सूर्य कला के आगार में स्थित मानकर साधक पूजा करे। इससे नाम युक्त प्रतिमा वाली कामबाण से पीड़ित अपांग मन विह्वल हो जाती है। उसकी दृष्टि दूर-दूर तक देखने लगती है। उसके जघन स्थल फड़कने लगते हैं। प्रबल कामेच्छा से वह मदमाती होकर मिलने की इच्छा से बेचैन हो जाती है। उसकी योनि फैल जाती है। शक्ति चक्र से निकले कामबाण के प्रभाव से शक्ति मिलन की इच्छा से प्रकट हो जाती है। काम अंकुश 'क्रों' के प्रभाव से वह सुदूर स्थान से चल पड़ती है। वह चिन्तारहित हो जाती है। उसका हृदय वशीभूत हो जाता है। वह अपने चरित्र, भय, लज्जा को त्याग देती है। मिलने की इच्छा से वह महल का घेरा पार कर जाती है। पहाड़, गहरी नदियाँ, सुरक्षित प्राकार को प्रेम के अनुसन्धान के लिये पार कर जाती है। उसके हृदय कमल और मन कम्पित होते हैं।

मनोधिकमहामन्त्रवेगेनापहृतांशुकाम् ।।२७।।
विमूढामिव विक्षुब्धामिवाप्लुष्टामिव स्रुताम्।
लिखितामिव निःसंज्ञामिव प्रमथितामिव।।२८।।
दलितामिव संभ्रान्तामिवोत्त्रसमितामिव।
गलितामिव संभिन्नामिवाकुलितमानसाम्।।२९।।

भ्रमन्मन्त्रानिलोद्भ्रान्तपत्राकारां नभस्तले।
भ्रमन्तीमानयेन्नारी योजनानां शतैरपि।।३०।।

मन से भी अधिक तेज चलने वाले महामन्त्र के प्रभाव से उसका मन उसके वश में नहीं होता। वह विमूढ के समान, विक्षुब्ध के समान, प्लुष्ट के समान, लिखित श्रुति के समान, संज्ञारहित के समान, प्रमथित के समान, दलित के समान, भ्रान्त के समान, उत्त्रसित के समान, गलित के समान, संभिन्न के समान, व्याकुल मानस हवा से हिलते-डुलते पत्तों के समान आकाश के नीचे भ्रमणशील नारी सौ योजनों से दूर चलकर आ जाती है।

अथवा मातृकां सर्वां लिखित्वा चक्रबाह्यत:।
धारयेद्बाहुमूले य: सोऽवध्य: सर्वजन्तुषु।।३१।।
तथैव हि महेशानि स्वसंज्ञाक्रमयोगत:।
चन्दनागुरुकर्पूरैरजरामरतां लभेत्।।३२।।

दूसरे प्रकार से सभी अं सं क्षं तक की मातृकाओं को चक्र के बाहर चारों ओर लिखकर जो बाहुमूल में धारण करता है, वह सभी जन्तुओं से अवध्य हो जाता है। इस विधि में क्रमयोग से अपना नाम चन्दन, अगर, कपूर से लिखकर जो श्रीचक्र को धारण करता है, वह अजरता और अमरता प्राप्त करता है। अर्थात् न बूढ़ा होता है और न मरता है।

एतदेव विधानेन रोचनागुरुकुंकुमै:।
लिखितं चक्रयोगेन यस्मिन्कस्मिन्नपि स्थितम्।।३३।।
साध्यनाम स्वनाम्ना तु चक्रस्यान्तर्विदर्भितम्।
करोति सकलं लोकमचिरात्पादवर्तिनम्।।३४।।

इस प्रकार के विधान से गोरोचन, अगर, कुंकुम के लेप से चक्र लिखकर उसमें साध्य के नामाक्षरों को अपने नाम के अक्षरों से विदर्भित करके चक्र के मध्य में लिखकर धारण करने से सारा संसार उसके पैरों के तले वश में रहता है। विदर्भित करने की विधि यह है कि प्रारम्भ में साध्य नाम के दो अक्षर के बाद अपने नाम के दो अक्षर लिखें। इसी प्रकार सभी अक्षरों को लिखें, तो साध्य नाम साधक के नाम से विदर्भित हो जाता है।

मध्यं गतेन बीजेन महाकामकलात्मना।
एकमेकमवष्टभ्य साध्यनामाक्षरं प्रिये।।३५।।

बहिरप्यखिलैरेव वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः।
हेममध्यगतां कृत्वा धारयेद्वामके भुजे।।३६।।
शिखायामथवा वस्त्रे धारयेद्यत्र तत्र वा।
करोति दासभूतं हि त्रैलोक्यं सचराचरम्।।३७।।

चक्र मध्य में महाकामकला बीज से साध्य नाम के प्रत्येक अक्षर को अवष्टभ्य करके लिखें। अर्थात् साध्य के नाम के प्रत्येक अक्षर के चारों ओर कामकला बीज से घेर कर लिखें। इन अक्षरों को बाहर से मातृकाक्षरों से वेष्टित कर दें। इसे सोने के ताबीज में भरकर वाम भुजा में या शिखा में या वस्त्र में धारण करें, तो साधक के वश में तीनों लोकों के चर और अचर वश में हो जाते हैं।

सम्मोहयति राजानं वाजिनं दुष्टकुञ्जरम्।
चोरं केसरिणं सर्पं परमन्त्रमहाग्रहम्।।३८।।
शत्रून्वज्राशनिं शस्त्रं डाकिनीं शाकिनीं तथा।
भूतप्रेतपिशाचांश्च धारिता चक्ररूपिणी।।३९।।

इन चक्र को धारण करने वाला मनुष्य राजाओं को मोहित कर सकता है। बदमाश घोड़ों और हाथियों को वश में कर सकता है। वह चोरों, सिंहों, सर्पों को वश में कर सकता है। अभिचार मन्त्रों को निष्फल कर सकता है। अशुभ ग्रहों के बुरे प्रभाव को नष्ट कर सकती हैं। शत्रुओं, वज्र, शनि, शस्त्र, डाकिनी, शाकिनी और भूत, प्रेत, पिशाच के प्रभाव को नष्ट कर सकता है।

तेन चक्रेण संदर्भ्यं पुराणां नाम सुन्दरि।
मध्ये चतुष्पथे वापि चतुर्दिक्षु निधापयेत्।।४०।।
महाहल्लोहलो देवि ततो लोकस्य जायते।
योषितां च विशेषेण त्वदृष्टानामपीश्वरि।।४१।।
एतन्मध्यगतां पृथ्वीं सशैलवनकाननाम्।
चतुःसमुद्रपर्यन्तां ज्वलन्तीं चापि चिन्तयेत्।।४२।।

इस सुन्दरी चक्र में नगर के नाम के अक्षरों को इच्छित सुन्दरी के नामाक्षरों से संदर्भित अर्थात् ग्रथित करके चौराहे के मध्य में या नगर के चारों दिशाओं में स्थापित करने से लोकों में कोलाहल मच जाता है। पर्दानशीन औरत भी साधक के समीप आ जाती है। इस चक्र के मध्य में पहाड़ों, जंगलों सहित चारों समुद्रों तक विस्तृत पृथ्वी को जलते हुए रूप का चिन्तन करे, तो मनचाही पर्दानशीन औरत भी साधक के पास आ जाती है।

षण्मासध्यानयोगेन जायते मदनोपमः।
दृष्ट्यैवाकर्षयेल्लोकान्दृष्ट्यैव कुरुते वशम्।।४३।।
दृष्ट्या संक्षोभयेन्नारीं दृष्ट्या संहरते विषम्।
दृष्ट्या करोति चावेशं दृष्ट्या सर्वविमोहनम्।।४४।।
दृष्ट्या चातुर्थिकादींश्च नाशयेदचिराज्ज्वरान्।

छः महीनों तक इसका ध्यान करने से साधक दूसरा कामदेव हो जाता है। दृष्टि से ही लोक को आकर्षित करता है। और दृष्टि से वांछित को वश में कर लेता है। दृष्टि से ही नारी को संक्षुब्ध करता है। दृष्टि से ही विष के प्रभाव को नष्ट करता है। दृष्टि से ही आवेशित करता है। दृष्टि से ही सबों को मोहित करता है। दृष्टि से ही चातुर्थिक ज्वर को नष्ट कर देता है। प्रत्येक चौथे दिन आने वाले ज्वर को चातुर्थिक ज्वर कहते हैं।

एतत्प्रपूजितं रात्रौ सिन्दूरेण विचित्रितम्।।४५।।
करोति महदाकर्षं सुदूरादपि योषिताम्।

रात में सिन्दूर से श्रीचक्र बनाकर जब पूजा करता है, तब महाकर्षण होता है। आकर्षित होकर स्त्रियाँ बहुत दूर से भी साधक के पास चली आती हैं।

सर्वदिक्षु विदिक्ष्वेवं यथा देवी प्रपूज्यते।।४६।।
दिगनुक्रमयोगेण तदा सर्वं जगद्वशे।

चारों दिशाओं और विदिशाओं में देवी के पूजन करने से दिशा अनुक्रम योग से सभी दिशाओं का संसार वश में हो जाता है।

भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनागुरुकुंकुमैः।।४७।।
सन्दर्भयेत्तस्य मध्ये नगरं वाथवा पुरम्।
विपुलं देशमथवा विषयं मण्डलं च वा।।४८।।
स्वनामदर्भितं कृत्वा यदि भूमौ निधापयेत्।
धारयेदथवा हस्ते कण्ठे वा भुजमूलतः।।४९।।
शिखायामथवा वस्त्रे यत्र तत्र स्थितं च वा।
चक्रमेतन्महाभागे पुरक्षोभणमुत्तमम्।।५०।।

भोजपत्र पर गोरोचन, अगर, कुंकुम से श्रीचक्र बनाकर उसके मध्य भाग में नगर या पुरी या बड़ा देश अथवा विषय या मण्डल के नाम को अपने नामाक्षरों से विदर्भित करके यदि भूमि में साधक स्थापित करे, अथवा हाथ में धारण करे या

कण्ठ या भुजामूल में अथवा वस्त्र में या यत्र-तत्र स्थिति में इस चक्र को धारण करे, तो सबों में उत्तम क्षोभण होता है। हलचल होने लगता है।

अर्कक्षीरं कुंकुमं च धत्तूरकरसं तथा।
रोचनालक्तकं लाक्षारसं मृगमदोत्कटम्।।५१।।
एकीकृत्य चक्रमेतल्लिख्यते यस्य संज्ञया।
तस्य चोरग्रहव्याधिरिपुसिंहाहिवाजिनाम्।।५२।।
यक्षराक्षसभूतौघशाकिनीदुष्टचेतसाम् ।
लूतादिगर्दभज्वाला तथा शीतलिकोद्भवम्।।५३।।
भयं न विद्यते तस्य परमन्त्राभिचारकम्।
नित्यसंधारणाच्चापि कालमृत्युयमादयः।।५४।।
न शक्ता हिंसितुं सम्यग्रोमैकमपि सर्वदा।

अकवन का दूध, कुंकुम, धतूर का रस, गोरोचन, अलता, लाह का रस, कस्तूरी को एक में मिलाकर घोल बनावें। इस घोल से जिसके नाम से चक्र लिखा जाता है, उसे चोर, ग्रह, रोग, सिंह, सर्प, घोड़ों, यक्ष, राक्षस, भूत समूह, दुष्ट चेतस, शाकिनी, लूतादि, गर्दभ, ज्वाला, शीतोद्भव चेचक आदि का भय नहीं होता। दूसरों के द्वारा मन्त्र के अभिचार कर्म का भय भी नहीं होता। इस चक्र को सर्वदा धारण किए रहने से यम आदि कालमृत्यु भी कुछ हानि नहीं कर सकते हैं। उसका बाल बाँका भी नहीं कर सकते।

अथवा मध्यगां देवीं त्रिकोणोभयगां तथा।।५५।।
अधस्तान्नामसंयुक्तां रोचनाकुंकुमाङ्किताम्।
कुर्याद्यस्तु च सप्ताहाद्दासवत्किङ्करो भवेत्।।५६।।

चक्र मध्य के ऊर्ध्वमुख और अधोमुख त्रिकोणों के नीचे जिस साध्य का नाम गोरोचन और कुंकुम से लिखा जाता है, वह एक सप्ताह में दास के समान नौकर हो जाता है।

पीतद्रव्येण वालिख्य धारयेदिन्द्रदिग्गताम्।
नाम्ना सर्वज्ञभूतोऽपि मूको भवति तत्क्षणात्।।५७।।

चक्र को पीले घोल से लिख कर पूर्वाभि होकर जिसके नाम से धारण किया जाता है, वह सर्वज्ञ होने पर भी तत्क्षण गूंगा हो जाता है। अर्थात् कुछ नहीं बोल पाता है।

महानीलरसेनापि नाम संयोज्य पूर्ववत्।
दक्षिणाभिमुखो वह्नौ दग्ध्वा तं मारयेत्क्षणात्।।५८।।

महानील रस से चक्र में जिसका नाम लिखकर दक्षिण तरफ मुख करके आग में जला दिया जाता है, उस साध्य की मृत्यु क्षणभर में हो जाती है।

महिषाश्वपुरीषाभ्यां गोमूत्रेण समङ्कितम्।
क्षिप्त्वारनालमध्यस्थं विद्विष्टः सर्वजन्तुषु।।५९।।

भैंस के गोबर, घोड़े के लीद और गाय के मूत्र को बराबर-बराबर मिलाकर घोल बनावें। उस घोल से चक्र लिखकर आग में डालने से सभी जानवरों में विद्वेषण हो जाता है।

युक्त्वा रोचनया नाम काकपक्षस्य मध्यगम्।
लम्बमानं तदाकाशे उच्चाटनकरं परम्।।६०।।

कौए के पंख पर गोरोचन से साध्य का नाम लिखकर उसे आकाश में लटकाए रखने से महाउच्चाटन होता है।

दुग्धलाक्षारोचनादिमहानीलरसादिभिः ।
लिखित्वा धारयेद्देवि चातुर्वर्ण्यं वशं नयेत्।।६१।।

गाय का दूध, लाह, गोरोचन, महानील रस के घोल से इस चक्र को लिखकर धारण करने से साधक चारों वर्णों के लोगों को वश में कर लेता है।

एतदेव विधानेन जलमध्ये यदा क्षिपेत्।
सौभाग्यमतुलं तस्य स्नानपानान्न संशयः।।६२।।

इस विधान से चक्र को लिखकर यदि जल में गाड़ दें, तो उसे अतुनलीय सौभाग्य की प्राप्ति होती है। प्रचुर मात्रा में स्नान, पेय और अन्न की प्राप्ति होती है। इसमें कोई संशय नहीं है।

एतन्मध्यगतां देवि नगरीं वा वराङ्गनाम्।
सप्ताहात्क्षोभयेत्सत्यं ज्वलमानां विचिन्त्य ताम्।।६३।।

इस चक्र के मध्य में नगरी या वारांगना का नाम लिखें और उसका चिन्तन ज्वलमान रूप में करें, तो एक सप्ताह में संक्षोभण होता है।

महापातकयुक्तात्मा यदि देवि प्रपूजयेत्।
शमीदूर्वांकुराश्वत्थपल्लवैरथवार्कजैः ।।६४।।
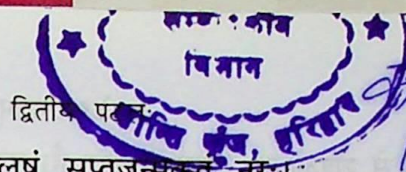
मासेन हन्ति कलुषं सप्तजन्मकृतं नरः।

ओ देवि! महापापी भी यदि देवी की पूजा शमी, दूर्वांकुर, पीपल या अकवन के पत्तों से एक महीने तक करे, तो पूर्व सात जन्मों के पापों का नाश हो जाता है।

लिखित्वा पीतवर्णं तु चक्रमेतद्यदार्चयेत्।।६५।।
पूर्वाशाभिमुखो भूत्वा स्तम्भयेत्सर्ववादिनः।

इस चक्र को पीले रंग से लिखकर पूर्वाभिमुख होकर अर्चन करे, तो सभी वादियों का शास्त्रार्थ में स्तम्भन हो जाता है।

सिन्दूररेणुलिखितं पूजयेदुत्तरामुखः।।६६।।
यदा तदास्य वशगो लोको भवति सर्वदा।

सिन्दूर चूर्ण से चक्र को लिखकर उत्तर की ओर मुख करके पूजन करे, तो साधक के वश में सर्वदा के लिये संसार हो जाता है।

चक्रं गैरिकमालिख्य पूजयेत्पश्चिमामुखः।।६७।।
स च सर्वाङ्गनाकर्षवश्यक्षोभकरो भवेत्।

श्रीचक्र को गेरू से लिखकर पश्चिम दिशा में मुख करके पूजा करे, तो सभी वरांगनाओं में आकर्षण, वश्य और क्षोभ उत्पन्न हो जाता है।

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा कृष्णवर्णं यदार्चयेत्।।६८।।
यस्य नाम्ना तस्य नित्यं मन्त्रहानिस्तु जायते।

काले रंग से चक्र को लिखकर दक्षिण मुख करके जिसके नाम से पूजा करे, तो उसके मन्त्र से ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

तद्वद्दिगन्तरालेषु पूजितं परमेश्वरि।।६९।।
स्तम्भविद्वेषणव्याधिशत्रूच्चाटनकारकम्।

ईशान दिशा में चक्र की पूजा करने से शत्रुओं को परालाइसिस, शर्त्रुता, विद्वेषण, रोग और उच्चाटन हो जाता है।

रोचनालिखितं देवि दुग्धमध्ये वशङ्करम्।।७०।।
क्षिप्तं गोमूत्रमध्ये वा शत्रूच्चाटनकारकम्।
तक्रमध्यगतं चक्रं विद्वेषणकरं परम्।।७१।।
ज्वलज्ज्वलनमध्यस्थं सर्वशत्रुविनाशनम्।

चक्र को गोरोचन से लिखकर दूध में रखने से वशीकरण होता है। गोमूत्र

में रखने से शत्रुओं का उच्चाटन होता है। मट्ठा में रखने से विद्वेषण होता है। प्रज्वलित अग्नि में रखने से सभी शत्रुओं का नाश होता है।

अथवा देवदेवेशि यदेकान्ते चतुष्पथम्।।७२।।
तत्समीपे लिखेच्चक्रं सिन्दूरेण महाप्रभम्।
सर्ववाह्यत आरभ्य यावन्मध्यं महेश्वरि।।७३।।
अकारादिक्षकारान्तां मातृकां तत्र विन्यसेत्।
पूजयेद्रात्रिसमये कुलाचारक्रमेण यः।।७४।।
तत्क्षणात्स महेशानि साधकः खेचरो भवेत्।

एकान्त चौराहे के निकट महाप्रभ सिन्दूर से चक्र लिखे। चक्र के बाहर भूपुर के बाहर से प्रारम्भ करके अं से क्षं तक की मातृकाओं को मध्य तक लिखे। कुलाचार क्रम से रात में पूजा करे, तो उसी क्षण से साधक में आकाशगमन की शक्ति आ जाती है।

पूजयित्वा महादेवि तद्वदेकतरो गिरौ।।७५।।
अजरामरतां सम्यग्लभते नात्र संशयः।

पूर्वोक्त विधान से एकान्त पर्वत में पूजा करे, तो सम्यक् अजरता वृद्धत्व रहित और अमरता मृत्युरहित साधक हो जाता है, इसमें संशय नहीं है।

महाभूतदिने वापि श्मशाने यदि पूजयेत्।।७६।।
पूर्ववन्निशि देवेशि साधकः स्थिरमानसः।
पादुकाखड्गवेतालसिद्धक्रव्यमनः शिलाः।।७७।।
अञ्जनं विवरं चैव चेटकं यक्षिणीं तथा।
यत्किञ्चित्सिद्धिनिचयं विद्यते भुवनत्रये।।७८।।
तत्सर्वमेव सहसा साधयेत्साधकोत्तमः।

स्थिर मानस साधक यदि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी की रात में पूर्ववत् श्मशान में पूजा करे, तो खड़ाऊँ, खड्ग, वेताल सिद्ध क्रव्य मैन्सिल, अंजन, विवर, चेटक, यक्षिणी सिद्धि के अतिरिक्त जो भी सिद्धियों का समूह तीनों लोकों में होते हैं, वे सभी सिद्धि साधक को अचानक मिल जाती हैं।

।।वामकेश्वरीमतम् का द्वितीय पटल सम्पूर्ण।।

❖❖❖

तृतीयः पटलः

भगवंस्त्रिपुरामुद्राः सूचिता न प्रकाशिताः।
कथं विरचनं तासां क्रियते वद शङ्कर।।१।।

श्री देवी ने कहा कि प्रभो! त्रिपुरा की मुद्राएँ न सूचित हैं और न प्रकाशित हैं। हे शंकरजी उनकी रचना कैसे होती है, यह कहिये।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मुद्राः सर्वार्थसिद्धिदाः।
याभिर्विरचिताभिस्तु सम्मुखा त्रिपुरा भवेत्।।२।।

श्री शिव ने कहा कि देवी सुनिये, मैं सर्वार्थसिद्धिदा मुद्रा को बतलाता हूँ, जिसे बनाकर दिखाने से महात्रिपुरसुन्दरी प्रत्यक्ष हो जाती हैं।

परिवर्त्य करौ स्पष्टावंगुष्ठौ कारयेत्समौ।
अनामान्तर्गते कृत्वा तर्जन्यौ कुटिलाकृति।।३।।
कनिष्ठके नियुज्जीत निजस्थाने महेश्वरि।
त्रिखण्डैषा महामुद्रा त्रिपुराह्वानकर्मणि।।४।।

दोनों हाथों को उलटकर मिलावें। अंगूठों को सीधा रखें। दोनों तर्जनियों को तिरछी करके अनामिकाओं को पकड़ें और कनिष्ठाओं से लगावें, तो त्रिखण्डा महामुद्रा बनती है। यह त्रिपुरसुन्दरी के आवाहन में प्रयुक्त होती है।
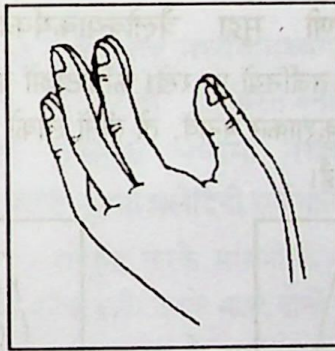
त्रिखण्डा महामुद्रा

मध्यमामध्यगे कृत्वा कनिष्ठेऽङ्गुष्ठरोधिते।
तर्जन्यौ दण्डवत्कृत्वा मध्यमोपर्यनामिका।।५।।
एषा तु प्रथमा मुद्रा सर्वसंक्षोभकारिणी।

पहली मध्यमा को दूसरी मध्यमा से मिलावें। कनिष्ठा और अंगूठा से दबावें। तर्जनी को सीधी करें; मध्यमा पर अनामिका लगावें। इस प्रकार सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा बनती है। यह त्रिपुरा की पहली मुद्रा है।
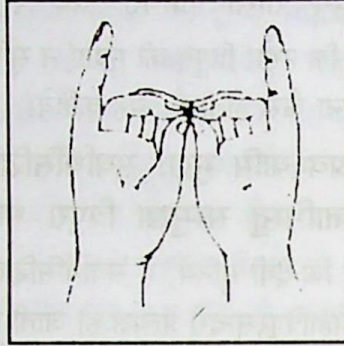
सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा

एतस्या एव मुद्राया मध्यमे सरले यदा।।६।।
क्रियेते परमेशानि सर्वविद्राविणी स्मृता।

पूर्वोक्त संक्षोभिणी की क्रिया में केवल मध्यमा को सीधी कर देने से सर्वविद्राविणी मुद्रा बन जाती है।

मध्यमातर्जनीभ्यां तु कनिष्ठानामिके समे।।७।।
अंकुशाकाररूपाभ्यां मध्यगे परमेश्वरि।
इयमाकर्षिणी मुद्रा त्रैलोक्याकर्षकारिणी।।८।।

मध्यमाओं को तर्जनियों पर रखें। कनिष्ठाओं को अनामिकाओं पर रखें। मध्यमा अंगुलियों को अंकुशाकार बनावें, तो तीनों लोको को आकर्षित करने वाली सर्वाकर्षिणी मुद्रा बनती है।
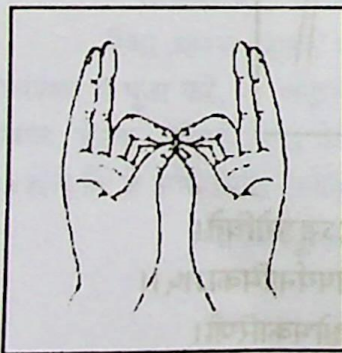
सर्वविद्रावणी मुद्रा
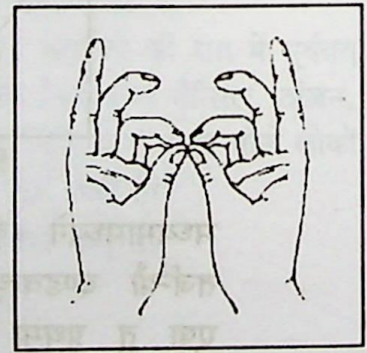
सर्वाकर्षिणी मुद्रा

स्फुटाकरौ करौ कृत्वा तर्जन्यावंशकुशाकृती।
परिवर्तक्रमेणैव मध्यगे तदधोगते।।९।।
क्रमेण देवि तेनैव कनिष्ठानामिकादयः।
संयोज्य निविडाः सर्वा अंगुष्ठावग्रदेशतः।।१०।।
मुद्रेयं परमेशानि सर्वावेशकरी स्मृता।

दोनों हाथों को पुटाकार करके दोनों तर्जनियों को अंकुशाकार करें। उनके बीच में मध्यमा लगावें। इसी प्रकार दानों कनिष्ठाओं को तिरछी करके उनके बीच में अनामिकाओं को लगावें। सबों को परस्पर गुंथी हुई जैसी दबा दें। उनके ऊपर दोनों अंगूठों को लगावें तो सर्ववश्यकरी मुद्रा बनती है।
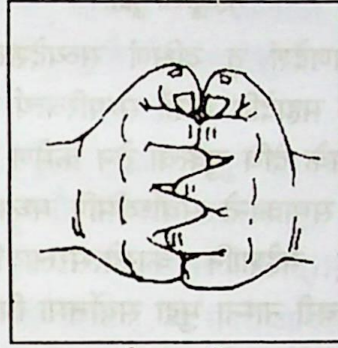
सर्ववश्यकरी मुद्रा

सम्मुखौ तु करौ कृत्वा मध्यमामध्यगेऽनुजे।।११।।
अनामिके तु सरले तद्बहिस्तर्जनीद्वयम्।
दण्डाकारौ तत्रांगुष्ठौ मध्यमा नखदेशगा।।१२।।
मुद्रैषोन्मादिनी नाम्ना क्लेदिनी सर्वयोषिताम्।

दोनों हाथों को सम्मुख करके मध्यमाओं से मध्यगत कनिष्ठाओं को पकड़ें। अनामिकाओं को सीधी रखें। उनके बाहर दोनों तर्जनियों को लगावें। अंगूठों को दण्डाकार सीधा करें। उन्हें मध्यमा के अग्रभाग में लगावें। यह मुद्रा स्त्रियों को क्लेदित करती है।

अस्यास्त्वनामिकायुग्ममधः कृत्वांकुशाकृति।।१३।।
तर्जन्यावपि तेनैव क्रमेण विनियोजयेत्।
इयं महांकुशा विद्या सर्वकामार्थसाधकी।।१४।।

दोनों हाथों की अनामिकाओं को अंकुशाकार करके दोनों तर्जनियों को उसी प्रकार करके उनसे लगा दें, तो सर्वकामार्थ साधकी महांकुशा मुद्रा बनती है।

महांकुशा मुद्रा

सव्यं दक्षिणदेशं तु दक्षिणं सव्यदेशतः।
बाहुं कृत्वा महादेवि हस्तौ सम्परिवर्त्य च।।१५।।
कनिष्ठानामिके देवि युक्त्वा तेन क्रमेण तु।
तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे।।१६।।
अंगुष्ठौ तु महेशानि कारयेत्सरलावपि।
इयं सा खेचरी नाम्ना मुद्रा सर्वोत्तमा प्रिये।।१७।।

बाँयें हाथ को दाहिने हाथ में उलटा रखकर कनिष्ठाओं और अनामिकाओं को तर्जनियों से पकड़ें। मध्यमा के पूर्वार्द्ध को मिलावें और अंगूठों को सीधा करें। इससे खेचरी मुद्रा बनती है। इसे सर्वोत्तम मुद्रा कहते हैं।

खेचरी मुद्रा

रचितैव महादेवि सर्वतेजोपहारिणी।
बद्धयैवैतया देवि दृश्यते साधकोत्तमः।।१८।।

सर्वयोगिनिवृन्दैस्तु ज्वलत्पानकसन्निभ:।
शाकिनीडाकिनीवृन्दै राकिणीलाकिनीगणै:।।१९।।
काकिनीहाकिनीभिस्तु ध्यातेयं परमेश्वरि।
एतया ज्ञातया देवि योगिनीनां भवेत्प्रिय:।।२०।।

इन मुद्राओं को बनाकर दिखाने से सभी तेजों को अपहृत करने वाली महादेवी बद्ध होकर साधक श्रेष्ठ को दिखायी देने लगती हैं। ज्वलित पेय के समान सभी योगिनी वृन्द, शाकिनी-डाकिनी वृन्द, राकिनी-शाकिनी गण, काकिनी-हाकिनी परमेश्वरी का ध्यान करती हैं। इन मुद्राओं का ज्ञानी योगिनियों का प्रियभाजन बन जाता है।

अत: समयमुद्रेयं सर्वासां परिकीर्तिता।
प्रयतोऽप्रयतो वापि शुचौ देशेऽथवाशुचौ।।२१।।
उत्थितो वोपविष्टो वा चङ्क्रमन्निश्चलोऽथवा।
उच्छिष्टो वा शुचिर्भूत्वा भुञ्जानो मैथुने रत:।।२२।।
मुद्राया मध्यमाङ्गुल्यौ परिवर्त्य क्रमेण तु।
पार्थिवं स्थानकं युक्त्वा सद्य: खेचरतां व्रजेत्।।२३।।

अब मैं समय मुद्राओं को कहता हूँ, जो सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। कठिन परिश्रमी या आलसी, पवित्र या अपवित्र स्थान में खड़ा या बैठा, चंचल या निश्चल, अपवित्र या पवित्र, भोजन करता हुआ या मैथुनलग्न अवस्था में जो साधक इस मुद्रा में मध्यमाओं को जोड़कर ललाट में लगाता है, वह तत्क्षण आकाश गमनत्व प्राप्त कर लेता है।

परिवर्त्य करौ स्पष्टावर्धचन्द्राकृती प्रिये।
तर्जन्यंगुष्ठयुगलं युगपद्भावयेत्तत:।।२४।।
अध:कनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजययेत्।
तथैव कुटिले योज्य सर्वाधस्तादनामिके।।२५।।
बीजमुद्रेयमचिरात्सर्वसिद्धिप्रवर्तकी ।

दोनों हाथों से अर्द्धचन्द्रकार के समान बनाकर दोनों तर्जनियों और दोनों अंगूठों को आपस में मिलावें। उसके नीचे मध्यमाओं से कनिष्ठाओं को जोड़ें। सबके नीचे अनामिकाओं को लगावें, तो बीजमुद्रा बनती है। यह मुद्रा सभी सिद्धियों को देने वाली है।

दोनों हाथों की अनामिकाओं को अंकुशाकार करके दोनों तर्जनियों को उसी प्रकार करके उनसे लगा दें, तो सर्वकामार्थ साधकी महांकुशा मुद्रा बनती है।

महांकुशा मुद्रा

सव्यं दक्षिणदेशं तु दक्षिणं सव्यदेशतः।
बाहुं कृत्वा महादेवि हस्तौ सम्परिवर्त्य च।।१५।।
कनिष्ठानामिके देवि युक्त्वा तेन क्रमेण तु।
तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे।।१६।।
अंगुष्ठौ तु महेशानि कारयेत्सरलावपि।
इयं सा खेचरी नाम्ना मुद्रा सर्वोत्तमा प्रिये।।१७।।

बाँयें हाथ को दाहिने हाथ में उलटा रखकर कनिष्ठाओं और अनामिकाओं को तर्जनियों से पकड़ें। मध्यमा के पूर्वार्द्ध को मिलावें और अंगूठों को सीधा करें। इससे खेचरी मुद्रा बनती है। इसे सर्वोत्तम मुद्रा कहते हैं।

खेचरी मुद्रा

रचितैव महादेवि सर्वतेजोपहारिणी।
बद्धयैवैतया देवि दृश्यते साधकोत्तमः।।१८।।

सर्वयोगिनिवृन्दैस्तु ज्वलत्पानकसन्निभः।
शाकिनीडाकिनीवृन्दै राकिणीलाकिनीगणैः।।१९।।
काकिनीहाकिनीभिस्तु ध्यातेयं परमेश्वरि।
एतया ज्ञातया देवि योगिनीनां भवेत्प्रियः।।२०।।

इन मुद्राओं को बनाकर दिखाने से सभी तेजों को अपहृत करने वाली महादेवी बद्ध होकर साधक श्रेष्ठ को दिखायी देने लगती हैं। ज्वलित पेय के समान सभी योगिनी वृन्द, शाकिनी-डाकिनी वृन्द, राकिनी-शाकिनी गण, काकिनी-हाकिनी परमेश्वरी का ध्यान करती हैं। इन मुद्राओं का ज्ञानी योगिनियों का प्रियभाजन बन जाता है।

अतः समयमुद्रेयं सर्वासां परिकीर्तिता।
प्रयतोऽप्रयतो वापि शुचौ देशेऽथवाशुचौ।।२१।।
उत्थितो वोपविष्टो वा चङ्क्रमन्निश्चलोऽथवा।
उच्छिष्टो वा शुचिर्भूत्वा भुञ्जानो मैथुने रतः।।२२।।
मुद्राया मध्यमाङ्गुल्यौ परिवर्त्य क्रमेण तु।
पार्थिवं स्थानकं युक्त्वा सद्यः खेचरतां व्रजेत्।।२३।।

अब मैं समय मुद्राओं को कहता हूँ, जो सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। कठिन परिश्रमी या आलसी, पवित्र या अपवित्र स्थान में खड़ा या बैठा, चंचल या निश्चल, अपवित्र या पवित्र, भोजन करता हुआ या मैथुनलग्न अवस्था में जो साधक इस मुद्रा में मध्यमाओं को जोड़कर ललाट में लगाता है, वह तत्क्षण आकाश गमनत्व प्राप्त कर लेता है।

परिवर्त्य करौ स्पष्टावर्धचन्द्राकृती प्रिये।
तर्जन्यंगुष्ठयुगलं युगपद्भावयेत्ततः।।२४।।
अधःकनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजययेत्।
तथैव कुटिले योज्य सर्वाधस्तादनामिके।।२५।।
बीजमुद्रेयमचिरात्सर्वसिद्धिप्रवर्तकी ।

दोनों हाथों से अर्द्धचन्द्रकार के समान बनाकर दोनों तर्जनियों और दोनों अंगूठों को आपस में मिलावें। उसके नीचे मध्यमाओं से कनिष्ठाओं को जोड़ें। सबके नीचे अनामिकाओं को लगावें, तो बीजमुद्रा बनती है। यह मुद्रा सभी सिद्धियों को देने वाली है।

बीज मुद्रा

मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरिसंस्थिते।।२६।।
अनामिकामध्यगते तथैवहि कनिषिके।
सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठपरिपीडिताः।।२७।।
एषा तु प्रथमा मुद्रा योनिमुद्रेति संस्मृता।

मध्यमाओं को टेढ़ी करके उन पर तर्जनियों को रखें। इनके बीच में अनामिकाओं को लगावें। इनके पीछे कनिष्ठाओं को लगावें। सबों को एकत्र करके अंगूठों से दबावें। इसे योनि मुद्रा कहते हैं। यह सर्वश्रेष्ठ मुद्रा है।
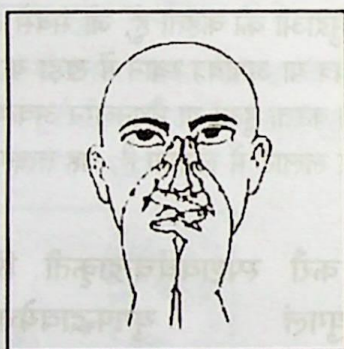
योनि मुद्रा

एता मुद्रा महेशानि त्रिपुराया मयोदिताः।।२८।।
पूजाकाले प्रयोक्तव्या यथानुक्रमयोगतः।

हे महेशानि! त्रिपुरा की सभी मुद्राओं को मैंने बतला दिया। पूजा के समय योगी इन मुद्राओं को क्रमानुसार प्रदर्शित करे।

।।वामकेश्वरीमतम् का तृतीय पटल सम्पूर्ण।।

चतुर्थः पटलः

भगवन्सर्वमाख्यातं मुद्राणां ज्ञानमुत्तमम्।
वदेदानीं महादेव्या एकैकाक्षरसाधनम्।।१।।
महाज्ञानप्रभावं च व्याप्तिं स्थानोद्भवं लयम्।
स्थूलसूक्ष्मविभागेन शरीरे परमेश्वर।।२।।

श्री देवी ने कहा कि भगवन आपने सभी मुद्राओं के उत्तम ज्ञान को कहा। अब महादेवी विद्या के प्रत्येक बीज की साधना की विधि कहिये। इन अक्षरों के महाज्ञान का प्रभाव व्याप्ति स्थान उद्भव लय शरीर में स्थूल सूक्ष्म विभाग से कहिये।

शृणु देवि महाज्ञानं सर्वज्ञानोत्तरं परम्।
येनानुष्ठितमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति।।३।।

श्री भैरव ने कहा कि देवी! सुनिये अब मैं सभी ज्ञानों से श्रेष्ठ परम महाज्ञान को कहता हूँ। जिसके अनुष्ठान मात्र से मनुष्य भवसागर से पार उतर जाता है।

त्रिपुरा परया शक्तिराद्या जातादितः प्रिये।
स्थूलसूक्ष्मविभागेन त्रैलोक्यत्पत्तिमातृका।।४।।
कवलीकृतनिःशेषतत्त्वग्रामस्वरूपिणी ।

आद्या पराशक्ति त्रिपुरा सृष्टि का प्रारम्भ है। स्थूल सूक्ष्म विभाग से तीनों लोकों की उत्पत्ति की मातृका हैं। महाप्रलय केपश्चात् सभी तत्त्वों का आवास होते हुए भी अपने स्वरूप में ही रहती हैं।

तस्यां परिणतायां तु न कश्चित्पर इष्यते।।५।।
परो हि शक्तिरहितः शक्तः कर्तुं न किञ्चन।

इसकी परिणति के बाद दूसरा कोई नहीं रहता। शक्तिरहित शक्त कुछ भी नहीं कर सकता। शक्ति से युक्त होने पर ही वह शक्तिमान होता है।

शक्तस्तु परमेशानि शक्त्या युक्तो यदा भवेत्।।६।।
शक्त्या विना शिवे सूक्ष्मे नाम धाम न विद्यते।
ज्ञातेनापि महेशानि कर्मं शर्मं न किञ्चन।।७।।
ध्यानावष्टम्भकाले तु न रतिर्न मतिः स्थितिः।
प्रविश्य परमार्गान्तः सूक्ष्माकारस्वरूपिणी।।८।।
कवलीकृतनिःशेषबीजाद्यांकुरतां गता।

हे परमेशानी! शक्त जब शक्ति से युक्त होता है, तभी वह शिव होता है। शक्ति के बिना शिव सूक्ष्म होता है, उसका कोई नाम धाम नहीं होता। शक्ति के बिना कोई कर्म धर्म नहीं होता। इस प्रकार के ध्यान के समय न प्रेम न विचार न स्थिति होती है। पर मार्ग में प्रवेश करने पर सूक्ष्म आकार स्वरूपिणी सबों को कवलीकृत कर लेती है। शेष बीज आद्या ही अंकुरित होती है।

वामा शिखा ततो ज्येष्ठा शृङ्गाटाकारतां गता।।९।।
रौद्री तु परमेशानि जगद्ग्रसनरूपिणी।

वामा शिखा ज्येष्ठा के रूप में वही त्रिकोण अर्थात् विश्व की योनि हैं। परम ईशानी रौद्री संसार को ग्रास करने वाली हैं।

एवं सा परमा शक्तिरेकैव परमेश्वरी।।१०।।
त्रिपुरा त्रिविधा देवी ब्रह्मविष्ण्वीशरूपिणी।
ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिरिच्छाशक्त्यात्मिका प्रिये।।११।।

वह एक ही शक्ति परमा परमेश्वरी है। त्रिविधा त्रिपुरा ब्रह्मा, विष्णु, ईशानरूपिणी हैं। वह इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति स्वरूपिणी हैं।

त्रैलोक्यं संसृजति अस्मात् त्रिपुरा परिकीर्तिता।
यदोल्लसति शृङ्गाटपीठात्कुटिलरूपिणी।।१२।।
शिवार्कमण्डलं भित्त्वा द्रावयन्तीन्दुमण्डलम्।
तदुद्भवामृतस्यन्दमदिरानन्दनन्दिता ।।१३।।
कुलयोषित्कुलं त्यक्त्वा परं पुरुषमेति सा।
निर्लक्षणं निर्गुणं च कुलरूपविवर्जितम्।।१४।।

तीनों लोकों की सृष्टि करती हैं। इसलिये उसे त्रिपुरा कहते हैं। जब उल्लसित होकर शृङ्गार पीठ से कुटिल रूप में चलती हैं, तब शिव के सूर्यमण्डल का भेदन करती हुई चन्द्र मण्डल को द्रवित करती हैं। उससे उत्पन्न अमृत मदिरा के आनन्द नन्दित वह कुलनारी कुल को छोड़कर परपुरुष के साथ रमण करती हैं। इससे वह लक्षणरहित गुणरहित कुल रूप विहीन हो जाती हैं।

ततः स्वच्छन्दरूपा तु परिभ्रम्य जगत्पुनः।
तेन चारेण सन्तुष्टा पुनरेकाकिनी सती।।१५।।

इसके बाद वह स्वछन्द होकर जगत में भ्रमण करती हैं। भ्रमण से सन्तुष्ट होकर वह पुनः एकाकिनी हो जाती हैं।

रमते सेयमव्यक्ता त्रिपुरा व्यक्तिमागता।
तत्त्वत्रयविनिर्दिष्टा वर्णशक्तित्रयात्मिका।।१६।।

वागीश्वरी ज्ञानशक्तिर्वाग्भवा मोक्षरूपिणी।
कामराजा कामकला कामरूपा क्रियात्मिका।।१७।।
शक्तिबीजा परा शक्तिरिच्छैव विषयरूपिणी।

अव्यक्त रूप से रमण करती हुई वह व्यक्त होती हैं। तब वह सत्त्व रज तम त्रय तत्त्वात्मिका वर्णशक्तित्रयात्मिका वागीश्वरी, ज्ञानशक्ति और वाग्भवा मोक्ष रूपिणी हो जाती हैं। कामराज कामकला कामरूपा क्रियात्मिका हो जाती हैं। पराशक्ति बीज इच्छा से ही बीज रूपिणी हो जाती हैं।

एवं देवी त्र्यक्षरा तु महात्रिपुरसुन्दरी।।१८।।
पारम्पर्येण विज्ञाता भवबन्धविमोचिनी।

इस प्रकार देवी त्र्यक्षरा ही महात्रिपुर सुन्दरी हैं। परम्परा से भवबन्धन की विमोचिनी के रूप में प्रसिद्ध हैं।

संस्मृता पापहरणी जप्ता मृत्युविनाशिनी।।१९।।
पूजिता दुःखदारिद्र्यव्याधिदौर्भाग्यघातकी।
हुता विघ्नौघशमनी ध्याता सर्वार्थसाधकी।।२०।।

स्मरण करने से पापों का नाश करती हैं। जप करने से मृत्यु का विनाश करती हैं। पूजा करने से दुःख, दरिद्रता, रोग, दौर्भाग्य का नाश करती हैं। हवन करने पर विघ्नों के समूह को नष्ट करती हैं। ध्यान करने से सभी कामनाओं को पूर्ण करती हैं।

एतस्याः शृणु देवेशि बीजत्रितयसाधनम्।
धवलाम्बरसम्वीतो धवलाम्बरमध्यगः।।२१।।
पूजयेद्धवलैः पुष्पैर्ब्रह्मचर्यरतो नरः।
धवलैरेव नैवेद्यैर्दधिक्षीरौदानादिभिः।।२२।।
सङ्कल्पधवलैर्वापि यथाकामं यथा लभेत्।

हे देवेशी! इनके तीनों बीजों की साधना को सुनों। ये तीन बीज 'कएईलह्रीं' वाग्भव, 'हकहलह्रीं' कामराज, 'हसकलह्रीं' शक्ति बीज हैं। वाग्भव बीज की साधना में साधक ब्रह्मचर्यरत हो। श्वेत वस्त्रधारी हो। श्वेत वस्त्र में अंकित चक्र की पूजा श्वेत उपचारों से करे। श्वेत नैवेद्य में दही, दूध, भात अर्पण करे। संकल्प भी श्वेत फूलों आदि से करे। ऐसा करने से उसकी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

सम्पूज्य परमेशानि ध्यायेद्वागीश्वरीं।।२३।।
बीजरूपामुल्लसन्तीं चिदानन्दप्रबोधिनीम्।
ब्रह्मग्रन्थिं विनिर्भिद्य जिह्वाग्रे दीपरूपिणीम्।।२४।।

पूजन के बाद परम ईशानी वागीश्वरी का ध्यान करें। तब चिदानन्द प्रबोधिनी बीजरूप में उल्लसित होती हैं। ब्रह्मग्रन्थि का भेदन करके जिह्वाग्र में दीपरूपिणी होती हैं।

चिन्तयेन्नष्टहृदयो ग्राम्यो मूर्खोऽतिपातकी।
शठोऽपि यः पादमेकं सुस्पष्टं वक्तुमक्षमः।।२५।।
जडो मूकोऽपि दुर्मेधा गतप्रज्ञोऽपि नष्टधीः।
सोऽपि संजायते वाग्मी वाचस्पतिरिवापरः।।२६।।

नष्ट हृदय, गँवार, मूर्ख, अतिपापी, अक्षम, जड़, गूँगा, मेधाविहीन, गतप्रज्ञ, नष्टबुद्धि, भी यदि एक पद का स्पष्ट उच्चारण करे, तो वह भी दूसरे बृहस्पति के समान वक्ता हो जाता है।

सत्पण्डितघटाटोपजेताऽप्रतिहतप्रभः ।
षट्तर्कपदवाक्यार्थशब्दालङ्कारसारवित् ।।२७।।
वातोद्धूतसमुद्रोर्मिमालातुल्यैरुपन्यसेत्।
सुकुमारतरस्फाररीत्यलङ्कारपूर्वकैः ।।२८।।
पदगुम्फैर्महाकाव्यकर्ता देवेशि जायते।

वह वास्तविक पण्डित हो जाता है। अनेक शास्त्रों का अर्थ करने में अविजित होता है। छहों शास्त्रों के पद, वाक्यार्थ, शब्दालंकार सारांश का ज्ञाता होता है। आँधी से आलोड़ित समुद्र की लहरों की माला के समान अपने तर्क को प्रतिद्वन्द्वी के सामने उपस्थापित करता है। सुकुमारतर स्फारित रीति अलंकारपूर्वक पदगुम्फित काव्यकर्ता हो जाता है।

वेदवेदान्तसिद्धान्तवेदाङ्गज्ञानपारगः ।।२९।।
ज्योतिः शास्त्रेतिहासादिमीमांसास्मृतिवाक्यवित्।
पुराणरसवादादिगारुडानेकमन्त्रवित् ।।३०।।
पातालशास्त्रविज्ञानभूततन्त्रार्थतत्त्ववित् ।
विचित्रचित्रकर्मादिशिल्पानेकविचक्षणः ।।३१।।

वेद-वेदान्त, सिद्धान्त-वेदाङ्ग ज्ञान का परिगामी होता है। ज्योतिषशास्त्र, इतिहास आदि मीमांसा स्मृति वाक्यों का ज्ञाता हो जाता है। पुराण, रसवाद आदि गारुड़ अनेक मन्त्रों का ज्ञाता हो जाता है। पातालशास्त्र विज्ञान भूत तन्त्रों के अर्थ तत्त्वों का जानकार हो जाता है। विचित्र चित्र कर्मा आदि अनेक शिल्पों का विशेषज्ञ होता है।

महाव्याकरणोदारशब्दसंस्कृतसर्वगीः।
सर्वभाषारुतज्ञानसमस्तलिपिकर्मवित्।।३२।।
नानाशस्त्रार्थशिल्पादिवेदवेदाङ्गविश्रुतः।
सर्ववाङ्मयवेत्ता च सर्वज्ञो देवि जायते।।३३।।

महाव्याकरण उदार शब्द संस्कृत का सर्वज्ञानी हो जाता है। सभी भाषाओं का ज्ञानी और सभी लिपिकर्मों का ज्ञाता हो जाता है। नाना शास्त्रों के अर्थ, शिल्प वेद-वेदाङ्ग ज्ञाता के रूप में विख्यात हो जाता है। सभी भाषाओं का ज्ञाता सर्वज्ञ हो जाता है।

यदा कामकलारूपा मदनांकुरगोचरे।
तरुणारुणबिम्बार्ककिरणाभा महेश्वरि।।३४।।
स्फुरद्दीपशिखाकारा बिन्दूधाराप्रवर्षिणी।
समस्तभुवनाभोगकवलीकृत जीविता।।३५।।
महास्वमहिमाक्रान्तिध्वस्ताहङ्कृतिभूमिका।
क्रमेण च ततोऽनङ्गपर्यन्तात्प्रोल्लसन्त्यपि।।३६।।
शरीरानङ्गपर्यन्तमेकैकमुभयात्मिका।
ततो भवति देवेशि सर्वशृङ्गारमानिनाम्।।३७।।
रागिणां साधको देवि बाधको मदनाधिकः।

महेश्वरी कामकलारूपा 'ह क ह ल ह्रीं' कामराज कूट की साधना अंकुर जब योनि में गोचर होती है, तब तरुण अरुण सूर्य किरणों जैसी आभा होती है। दीपशिखा की आकृति में प्रस्फुटित होती है, तब बिन्दु धारा की वर्षा होने लगती है। वह सभी भुवनों को भोगों अर्थात् आनन्दों का ग्रास करके जीवित रहती है। तब महा स्व अहंकार उसमें विलीन हो जाता है। कामराज बीज के अक्षर क्रमशः उसे कामदेव के समान प्रेम के देवता बना देते हैं। देवेशि! तब वह सभी शृङ्गारों का मान्य होता है। अनुरागियों में वह साधक कामदेव से भी अधिक बाधक होता है।

तद्दृष्टिपथगा नारी सुरी वा यदिवासुरी।।३८।।
विद्याधरी किन्नरी वा यक्षनागाङ्गनाथवा।
प्रचण्डतरभूपालकन्यकाः सिद्धकन्यकाः।।३९।।
ज्वलन्मण्डलदुष्प्रेक्ष्यमदनोत्तमानसाः।
क्लिन्नाःप्रचलिताङ्ग्यस्तु विमूढा मदविह्वलाः।।४०।।
निवेदितात्मसर्वस्वा जायन्ते वशगाः प्रिये।

उसे साधक को मार्ग में देखकर सुरबाला या असुरबाला, विद्याधरी, किन्नरी, यक्षिणी या नागांगना, अतिप्रचण्ड राजकन्या, सिद्धकन्या कामातुरा होकर ज्वलनमण्डल दुष्प्रेक्ष्य हो जाती हैं। वे क्लिन्न, बेचैन अंगों वाली, विमूढ़, मदविह्वल होकर अपना सर्वस्व साधक को सौंपकर उसके वश में हो जाती है।

चलज्जलेन्दुसदृशी बालार्ककिरणारुणा।।४१।।
चिन्तिता योषितां योनौ संक्षोभयति तत्क्षणात्।

किसी तरुणी की योनि में चंचल जल में चन्द्र के बिम्ब और नवोदित सूर्य की लाल किरणों के समान देवी का चिन्तन उस तरुणी को तत्क्षण कामातुर बना देता है।

सैव सिन्दूरवर्णाभा हृदये चिन्तिता सती।।४२।।
संमोहोन्मादनावेशचित्ताकर्षकरी स्मृता।

सिन्दूर वर्ण की आभा वाली देवी का चिन्तन यदि स्त्री के हृदय में करें, तो युवनी सम्मोह, उन्माद, आवेश युक्त आकर्षित हो जाती है।

नियोजिताथवा मूर्ध्नि वर्षन्ती रक्तबिन्दवः।।४३।।
धारणासंप्रयोगेण करोति विवशं जगत्।

लाल बिन्दुओं की वर्षा करती हुई देवी को अपनी मूर्धा पर नियोजित करके धारणा करने से सारा संसार वश में हो जाता है।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं भुवि दुर्लभम्।।४४।।
येन विज्ञातमात्रेण साधको मदनायते।

अब मैं संसार में दुर्लभ दूसरे प्रयोग को कहता हूँ, जिसके ज्ञान मात्र से ही साधक कामदेव के समान हो जाता है।

कामस्थं काममध्यस्थं कामोदरपुटीकृतम्।।४५।।
कामेन साधयेत्कामं कामं कामेषु निक्षिपेत्।
कामेन कामितं कृत्वा कामस्थः क्षोभयेज्जगत्।।४६।।

कामस्थ काम मध्यस्थ कामोदर से सम्पुटित करें। काम के द्वारा काम का साधन करें। काम को काम से निक्षिप्त करें। काम के द्वारा कामित करके कामस्थ होकर जगत को क्षुब्ध करें।

शक्तिबीजस्वरूपां तु सृष्ट्या संहतिसीमया।
सृष्टिसंहारपर्यन्तं शरीरे परिचिन्तयेत्।।४७।।

'ह स क ल ह्रीं' शक्तिकूट की साधना

शक्ति बीज स्वरूपा देवी सृष्टि और संहार करती हैं। सृष्टि से लेकर संहार तक शरीर में चिन्तन करें।

यतो भवति देवेशि वैनतेय इवापरः।
नागानां दर्शनादेव जडीकरणकारकः।।४८।।
दाहिनाममृतासारधीरधाराधारोपमः ।
स्थिरकृत्रिमशङ्काख्यविषोपविषनाशकः।।४९।।
दुष्टव्याधिग्रहानेकडाकिनीरूपिकागणः।
भूतप्रेतपिशाचौघैस्त्रिनेत्र इव दृश्यते।।५०।।

ऐसे करने से साधक दूसरे गरुड़ के समान हो जाता है। इसे देखते ही सर्प जड़ीभूत हो जाते हैं। साधक के स्थैर्य से वे चमत्कृत हो जाते हैं और उनके अमृत की धार बहने लगती है। इससे सामान्य विष, कृत्रिम विष, उपविषों का नाश हो जाता है। दुष्ट रोग अनेक ग्रहों की पीड़ा डाकिनीगण भूत-प्रेत पिशाचों के समूह को साधक त्रिनेत्र महादेव के समान दिखायी पड़ने लगता है और वे भाग जाते हैं।

अथवा येन विद्येयं परिपूर्णा विचिन्त्यते।
नाभिमण्डलहृत्पद्ममुखमण्डलमध्यगा।।५१।।
केवलैवं महेशानि पद्मरागसमप्रभा।
तस्याष्टगुणमैश्वर्यमचिरात्संप्रवर्तते ।।५२।।

सम्पूर्ण श्रीविद्या 'क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं' के प्रथम वाग्भव कूट 'क ए ई ल ह्रीं' का चिन्तन नाभि मण्डल में करें। द्वितीय कामराज कूट 'ह क ह ल ह्रीं' का चिन्तन हृदयकमल में करें। तृतीय शक्तिकूट 'ह स क ल ह्रीं' का चिन्तन मुखमण्डल में करें। हे महेशानि! इन कूटों का चिन्तन केवल पद्मराग के वर्ण का करें, तो उसके ऐश्वर्य में आठ गुणा वृद्धि होकर वह दीर्घकाल तक उसके पास रहता है। वह दीर्घजीवी होता है।

मनसा संस्मरत्यस्या यदा नामापि साधकः।
तदैव मातृचक्रस्य विदितो भवति प्रिये।।५३।।

साधक यदि इस विद्या का मानसिक स्मरण करता है, तब उसे समस्त मातृचक्र का ज्ञान हो जाता है।

यदैव जपते विद्यां महात्रिपुरसुन्दरीम्।
तदैव मातृचक्राज्ञा संक्रामत्यस्य विग्रहे।।५४।।

सर्वासां सर्वसंस्थानां योगिनीनां भवेत्प्रिय:।
पुत्रवत्परमेशानि ध्यानादेव हि साधक:।।५५।।
यदा तु परमेशानि परिपूर्णा प्रपूजयेत्।
प्रयच्छन्ति तदैवास्य खेचर्य: सिद्धिमुत्तमाम्।।५६।।
चतुष्षष्टिर्यत: कोट्यो योगिनीनां महौजसाम्।
चक्रमेतत्समाश्रित्य संस्थिता वीरवन्दिते।।५७।।

साधक जब महात्रिपुरसुन्दरी विद्या का जप करता है, तब मातृचक्र का संक्रमण उसके विग्रह में हो जाता है। उसके विग्रह के सभी स्थान सभी योगिनियों का प्रिय हो जाता है। ध्यान करने से साधक पुत्र के समान उनका प्रिय हो जाता है। जब परिपूर्णा परमेशानी का पूजन करता है, तब उसे आकाशगमन की उत्तम सिद्धि प्राप्त हो जाती है। हे वीरवन्दिते! चौंसठ करोड़ महौजस योगिनियाँ इस चक्र के समाश्रित होकर विद्यमान हो जाती हैं।

आदे: संबन्धिनि पदे मध्ये बीजाष्टकं बहि:।
कला ध्यात्वाङ्गनानङ्गे जायतेऽनङ्गवत्प्रिये।।५८।।

प्रथम वाग्भव कूट के स्थान मे द्वितीय कामराज कूट को रखने से षोडशदल कमल के बाहर अष्टदल कमल होता है। इसके पहले कामाकर्षिण्यादि सोलह कलायें होती हैं। साध्या की योनि में मदनादि शब्दों को कहकर कामदेव का ध्यान करने से साधक सारे संसार को अपने वश में कर सकता है। वह कामदेव के समान हो जाता है।

करशुद्ध्यादिविद्यानामेकैकं परमेश्वरि।
रुद्रयामलतन्त्रे तु कर्म प्रोक्तं मया पुरा।।५९।।

करशुद्धि आदि विद्याओं में से प्रत्येक के कर्मो का वर्णन पहले रुद्रयामल तन्त्र में मैंने किया है।

मादनैर्मदनो भूत्वा पाशांकुशधनु:शरै:।
क्षोभयेत्स्वर्गभूलोकपातालतलयोषित:।।६०।।

कामदेव के मादन मन्त्र से कामदेव होकर वह पाश अंकुश धनुष बाणों से स्वर्ग भूलोक पाताल की सभी तरुणियों को कामातुर बना सकता है।

तथैव शाक्तैर्देवेशि त्रिपुरीकृतविग्रह:।
साधयेद्देवगन्धर्वसिद्धविद्याधरानपि ।।६१।।

उसी प्रकार शाक्त साधक अपने को त्रिपुरा के समान बनाकर देव कन्या, गन्धर्व कन्या, सिद्ध कन्या और विद्याधर की कन्याओं को अपने वश में कर सकता है।

तत्र शाक्ता ममावज्रप्रस्तारजनिताः शराः।
मादनास्त्वादिपरतः सर्वाधःस्था नियोजिताः।।६२।।

तब शाक्त हीरक जनित बाणों से शक्तिशाली हो जाता है। वह दूसरे कामदेव के समान हो जाता है। वह सर्वत्र ऊपर नीचे पूज्य हो जाता है। पूजित होता है।

आद्यन्तगो महापाशः पौरुषेयः प्रकीर्तितः।
रुद्रशक्तिः कुण्डलाख्या माया स्त्रीपाश उच्यते।।६३।।
तुरीयमरुणावर्गाद्द्वितीयमपि पार्वति।
स्त्रीपुंस्कोदण्डयुगलं कामाग्निव्यापकोऽङ्कुशः।।६४।।

'ह्रीं' महापाश है। विख्यात रुद्र शक्ति कुण्डलिनी अर्थात् माया को स्त्रियों को वशीभूत करने वाली कहा जाता है। पाँच बाणों के बीज मन्त्र 'हं सं रं लं वं' हैं। महाधनुष 'क्रों' है। ईख धनुष को 'थं दं' कहते हैं।

मुद्रा यास्त्रिपुरायास्तु देवि सिद्ध्यष्टकान्विताः।
ता एव सर्वचक्रेषु पूजाकाले प्रपूजयेत्।।६५।।
अतः प्रधानविद्येयं त्रिपुरा परमेश्वरी।
नैतस्याः सदृशी काचिद्विधा देवेशि विद्यते।।६६।।

त्रिपुरा की आठ मुद्राओं और आठ सिद्धियों का पूजन सभी आवरणों की पूजा के साथ करना चाहिए। जैसा कि चक्रपूजा के क्रम में पहले लिखा गया है। अतः त्रिपुरा परमेश्वरी ही प्रधान विद्या हैं। इसके समान कोई दूसरी विद्या नहीं है।

एतामेव पुराराध्य विद्यां त्रिपुरभैरवीम्।
त्रैलोक्यमोहनं रूपमकार्षीद्भगवान्हरिः।।६७।।

त्रिपुरा की पूजा के पहले त्रिपुर भैरवी विद्या का आराधन करके साधक भगवान विष्णु के समान तीनों लोकों को मोहित करने वाले रूप का हो जाता है।

कामदेवोऽपि देवेशि महात्रिपुरसुन्दरीम्।
समाराध्याभवल्लोके सर्वसौभाग्यसुन्दरः।।६८।।

हे देवेशि! कामदेव भी महात्रिपुर सुन्दरी की आराधना करके लोकों में सर्वसौभाग्य सुन्दर हो गया है। सबों को मोहित करने वाला हो गया है।

मयापि यद्वतस्थेन क्रियतेऽद्यापि सुन्दरि।
जप्यं त्रिसन्ध्यमेतस्यास्तदेतत्पदसिद्धये।।६९।।
मध्यप्रपूजनाद्देवि जायते वाक्पतिर्नरः।
तथैवापरकन्दर्पो बाह्यमध्यान्तरेऽर्चनात्।।७०।।

मैं आज भी जहाँ रहता हूँ, वहाँ तीनों सन्ध्याओं में श्रीविद्या का जप करता हूँ। पहले की साधना से ही आज मैं इस पद पर हूँ। श्रीचक्र के मध्य बिन्दु त्रिकोण का पूजन करने से मनुष्य वाचस्पति हो जाता है। उसी प्रकार बाह्य अभ्यन्तर की पूजा से दूसरे कामदेव के समान हो जाता है।

सर्वेण सर्वदा सर्वदेवीयुक्तेन पार्वति।
साधयेत्खेचरीसिद्धिमणिमादिगुणान्विताम्।।७१।।

सभी देवियों सहित सर्वदा जो श्रीचक्र का पूजन करता है, उसे खेचरी सिद्धि के साथ-साथ अणिमादि आठों सिद्धियों की प्राप्ति हो जाती है।

।। वामकेश्वरीमतम् का चौथा पटल सम्पूर्ण।।

पञ्चमः पटलः

सर्वमेव त्वया प्रोक्तं त्रिपुराज्ञानमुत्तमम्।
कामतत्त्वं विषज्ञानं मोक्षतत्त्वं त्रयं तथा।।१।।
इदानीं जपहोमाभ्यां विधानं वद शङ्कर।
येनानुष्ठितमात्रेण मन्दभाग्योऽपि सिद्ध्यति।।२।।

श्री पार्वती ने कहा कि शंकर जी आपने त्रिपुरा के सभी उत्तम ज्ञानों को कहा, जिनमें कामतत्त्व, विषज्ञान, मोक्ष और तीनों तत्त्व आ गये हैं। अब इनके जप, हवन विधान को कहिये। जिनके अनुष्ठान से मन्द भाग्य मनुष्य भी भाग्यवान हो जाता है, सिद्ध हो जाता है।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि त्रिपुरामन्त्रसाधनम्।
जपहोमविधानं तु समीहितफलप्रदम्।।३।।

श्री भैरव ने कहा देवि! सुनिये मैं त्रिपुरा मन्त्र साधन, जप, होम विधान को कहता हूँ, जो समीहित फल प्रदायक हैं।

चक्रमभ्यर्च्य विधिवत्सकलं परमेश्वरि।
मध्यं वा केवलं देविं बाह्यमध्यगतं तु वा।।४।।

तदग्रे संस्थितो मन्त्री सहस्त्रं यदि वा जपेत्।
व्रतस्थः परमेशानि ततोऽनन्तफलं लभेत्।।५।।

परमेश्वरि! साधक पूरे श्रीचक्र का विधिवत् अर्चन करके या मध्य का अर्चन करके या केवल बाह्य मध्यगत देवी का अर्चन करके उसके सामने बैठकर यदि एक हजार जप व्रतस्थ होकर करे, तो अगणित अनन्त फल प्राप्त करता है।

ध्यात्वा वा हृद्‌गतं चक्रं तत्रस्थां परमेश्वरीम्।
पूर्वोक्तध्यानयोगेन संचिन्त्य जपमारभेत्।।६।।
निगदेनोपांशुना वा मानसेनापि सुव्रते।
पूर्वोक्तयाससन्नद्धो मुद्रासन्नद्धविग्रहः।।७।।

अथवा हृदय में चक्र का ध्यान करके वहाँ बैठी देवी का पूर्वोक्त ध्यान योग से चिन्तन करके जप का प्रारम्भ करे। पूर्वोक्त न्यासों को करके मुद्रा सन्नद्ध रूप होकर वैखरी उपांशु या मानसिक जप करे।

मुक्ताहारमयीं स्फीतवैडूर्यमणिसम्भवाम्।
पुत्रजीवकपद्माक्षरुद्रास्फटिकोद्भवाम् ।।८।।
प्रवालपद्मरागादिरक्तचन्दननिर्मिताम् ।
कुंकुमागुरुकर्पूरमृगनाभिविभूषिताम् ।।९।।
अक्षमालां समाहृत्य त्रिपुरीकृतविग्रहः।
लक्षमात्रं जपेद्देवि महापापैः प्रमुच्यते।।१०।।

साधक मोती, सुन्दर वैडूर्य, पुत्रजीव, कमलगट्टा, रुद्राक्ष, स्फटिक, मूंगा, पद्मराग, लाल चन्दन आदि की माला ग्रहण करे। अपने अंगों में कुंकुम, अगर, कपूर, कस्तूरी लगाकर त्रिपुरा स्वरूप होकर अक्षमाला से श्रीविद्या का एक लाख जप करे, तो सभी महापापों से विमुक्त हो जाता है।

लक्षद्वयेन पापानि सप्तजन्मकृतान्यपि।
नाशयेत् त्रिपुरा देवी साधकस्य न संशयः।।११।।

श्रीविद्या 'क ए ई ल ह्रीं ह क ह ल ह्रीं ह स क ल ह्रीं' के दो लाख जप से साधक के सात जन्मों के पापों का नाश देवी त्रिपुरा कर देती हैं। इसमें संशय नहीं है।

जप्त्वा लक्षत्रयं मन्त्री प्रयतो मन्त्रविग्रहः।
पातकं नाशयेदाशु सप्तजन्मसहस्त्रजम्।।१२।।

श्रीविद्या के तीन लाख जप एकाग्रता से करने पर मन्त्री के सात जन्मों के हजारों पापों का नाश तुरत हो जाता है।

जप्तवा विद्यां चतुर्लक्षं महावागीश्वरो भवेत्।
पञ्चलक्षाच्चादरिद्रः साक्षाद्वैश्रवणायते।।१३।।

श्रीविद्या के चार लाख जप करने पर साधक वाचस्पति हो जाता है। पाँच लाख जप करने पर दरिद्र साक्षात् कुबेर हो जाता है अर्थात् बहुत धनवान हो जाता है।

जप्त्वा फड्लक्षमेतस्या महाविद्याधरेश्वरः।
जप्त्वैव सप्त लक्षाणि खेचरीमेलकं व्रजेत्।।१४।।

श्रीविद्या का जप छः लाख करने पर साधक सभी विद्याओं का ज्ञाता विद्याधर हो जाता है। सात लाख जप करने पर साधक को खेचरी सिद्धि अर्थात् आकाशगमन की क्षमता प्राप्त होती है।

अष्टलक्षप्रमाणं तु जप्त्वा विद्यां महेश्वरि।
अणिमाद्यष्टसिद्धीशो जायते देवपूजितः।।१५।।

महेश्वरीविद्या के आठ लाख जप से साधक को अणिमादि आठों सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। वह सिद्धिश्वर होकर देवताओं से पूजित होता है।

नवलक्षप्रमाणं तु जप्तवा त्रिपुरसुन्दरीम्।
विधिवज्जायते मन्त्री रुद्रमूर्तिरिवापरः।।१६।।

त्रिपुर सुन्दरी के नव लाख जप विधिवत् करने से साधक दूसरे रुद्र स्वरूप का हो जाता है।

कर्ता हर्ता स्वयं गौरि लोकेऽप्रतिहतप्रभः।
नित्यप्रमुदितो वीरः स्वच्छन्दगतिरीश्वरः।।१७।।

हे गौरी! वह स्वयं कर्ता हर्ता होकर लोकों में अप्रतिहत प्रभा वाला हो जाता है। वह नित्य आनन्दित वीर स्वच्छन्द गति का ईश्वर हो जाता है।

निगदेन यदाजप्तं लक्षं चोपांशुना कृतम्।
मानसेन महेशानि कोटिजापफलं लभेत्।।१८।।

एक लाख वैखरी और उपांशु जप से जो फल मिलता है, उससे एक करोड़ गुना अधिक फल मानसिक जप से मिलता है।

यत्र वा कुत्रचिद्देशे लिङ्गं वै पश्चिमामुखम्।
स्वयंभु बाणलिङ्गं वा इतरद्वापि सुव्रते।।१९।।
तत्र स्थित्वा जपेल्लक्षं त्रिपुरीकृतविग्रहः।
ततो भवति देवेशि त्रैलोक्यक्षोभको नरः।।२०।।

जहाँ कहीं भी पश्चिम की ओर मुख वाला स्वयंभूलिङ्ग या बाणलिङ्ग या सामान्य लिङ्ग मिले वहाँ पर स्थित होकर त्रिपुरा के समान अपना रूप बनाकर एक लाख जप करे, तो साधक तीनों लोकों को संक्षुब्ध करने वाला हो जाता है।

एवं जपं यथाशक्ति कृत्वादौ साधकोत्तमः।
होमं कुर्याद्दशांशेन कुसुमैर्ब्रह्मवृक्षजैः।।२१।।
कुसुम्भकुसुमैर्वापि त्रिमध्यक्तैर्यथाविधि।
ततो भवति विद्येयं महाविघ्नौघघातकी।।२२।।
सर्वकामप्रदा देवि भुक्तिमुक्तिफलप्रदा।

पहले इस प्रकार यथाशक्ति जप करके साधक श्रेष्ठ जप संख्या का दशांश हवन पलाश के फूलों से करे अथवा यथाविधि त्रिमधु दूध, घी, मधु से अक्त कुसुम्भ के फूलों से हवन करे, तब यह विद्या महाविघ्नों की विनाशिका हो जाती है। सर्वार्थ साधिनी यह विद्या भोग, मोक्ष फल प्रदान करती है।

योनिकुण्डे भगाङ्केवा वर्तुले वार्धचन्द्रके।।२३।।
नवत्रिकोणचक्रे वा चतुरस्रेऽष्टपत्रके।

यह हवन त्रिकोण भगाङ्क में या वृत्ताकार कुण्ड में या अर्द्धचन्द्र की आकृति के कुण्ड में या नव त्रिकोण चक्र में या चतुष्कोण कुण्ड में या अष्टपत्र कुण्ड में करे।

योनिकुण्डे भवेद्वग्मी भगाङ्के कृष्टिरुत्तमा।।२४।।
वर्तुले तु भवेल्लक्ष्मीरर्धचन्द्रे त्रयं लभेत्।

योनि कुण्ड में हवन करने से वक्ता होता है। भगाकार कुण्ड में हवन से खेती उत्तम होती है। गोलाकार कुण्ड में हवन से धन प्राप्त होता है। अर्द्धचन्द्राकार कुण्ड में हवन करने से तीनों वागीशत्व, उत्तम कृषि और धन की प्राप्ति होती है।

नवत्रिकोणकुण्डे तु खेचरत्वं प्रपद्यते।।२५।।
चतुरस्रे भवेच्छान्तिर्लक्ष्मीः पुष्टिररोगता।

नवत्रिकोण कुण्ड में हवन से आकाश गमन की शक्ति प्राप्त होती है। चतुष्कोण कुण्ड में हवन से शान्ति, लक्ष्मी, पुष्टि और आरोग्य की प्राप्ति होती है।

पद्माङ्के सर्वसम्पत्तिरचिरादेव जायते।।२६।।
चक्रेऽष्टकोणे सुभगे समीहितफलं लभेत्।

कमलाकार कुण्ड में हवन से थोड़े ही समय में सभी सम्पत्तियों की प्राप्ति होती है। अष्टकोण कुण्ड में हवन से समीहित फल मिलते हैं।

मल्लिकामालतीजातीपुष्पैराज्यपरिप्लुतैः।।२७।।
द्युतैर्भवति वागीशो मूकोऽपि परमेश्वरि।

गोघृत से परिप्लुत मल्लिका, मालती जाती के फूलों से हवन करने पर गूंगा भी वागीश्वर वक्ता हो जाता है।

करवीरजपापुष्पाण्याज्ययुक्तानि पार्वति।।२८।।
हुत्वाकर्षयते मन्त्री खभूपातालयोषितः।

कनैल, अड़हूल को गोघृत से प्लुत करके हवन करने पर साधक स्वर्गलोक, भूलोक, पाताल लोक की युवतियों को आकर्षित कर सकता है।

चन्द्रकस्तूरिकामिश्रं कृत्वा कुंकुममीश्वरि।।२९।।
हुत्वा कन्दर्पसौभाग्यात्स सौभाग्याधिको भवेत्।

कपूर कस्तूरी और कुंकुम के मिश्रण से हवन करने पर साधक कामदेव के सौभाग्य से भी अधिक सौभाग्यशाली हो जाता है।

चम्पकं पाटलादीनि हुत्वा वै श्रियमाप्नुयात्।।३०।।

चम्पा और गुलाब के फूलों से हवन करने पर धन प्राप्त होता है।

श्रीखण्डमगुरुं वापि कर्पूरं पुरसंयुतम्।
हुत्वा पुरपुरन्ध्रीणां देवि विक्षोभको भवेत्।।३१।।

श्रीखण्ड, चन्दन, अगर, कपूर के मिश्रण से हवन करने पर नगर की वेश्याएँ विक्षुब्ध होती हैं।

हुत्वा पलं त्रिमध्वक्तं कृत्वा स्मृत्वा महेश्वरीम्।
खेचरो जायते देवि गत्वा नक्तं चतुष्पथे।।३२।।

रात में चौराहे पर जाकर नग्न होकर पल भर महेश्वरी का स्मरण करके चन्दन, अगर, कपूर चूर्ण को गोघृत में मिश्रित करके हवन करने से साधक आकाशचारी हो जाता है।

तदा दधिमधुक्षीरमिश्रांल्लाजान्महेश्वरि।
हुत्वा न बाध्यते रोगैः कालमृत्युभयादिभिः।।३३।।

दही, मधु, दूध में लावा मिलाकर हवन करने से रोगों का भय और काल मृत्यु का भय नहीं रहता।

।।वामकेश्वरीमतम् का पंचम पटल सम्पूर्ण।।

❖❖❖

।।वामकेश्वरीमतम् सम्पूर्ण।।

भार्गवतन्त्रम्

हिन्दी-व्याख्यासहितम्

हिन्दीभाष्यकार

कपिलदेव नारायण

वैदिक मार्ग के ज्ञान, कर्म, यज्ञ, तप के विरोध में बौद्ध धर्म और जैन धर्म का प्रचार-प्रसार बढ़ गया। ब्राह्मण धर्म का बहुत ह्रास हो गया। तब सातवीं, आठवीं ईस्वी शताब्दी में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के शासन काल में नारद, गौतम, अगस्त्य आदि मनीषियों ने भक्ति मार्ग के लिए पाञ्चरात्र संहिताओं का प्रतिपादन किया। मन्त्र से देवताओं का ध्यान करना जन-साधारण के लिए सुगम-सरल नहीं था। इसलिए प्रतिमा निर्माण, मन्दिर निर्माण करके उनमें देव प्रतिमा के स्थापन, पूजन, अर्चन आदि से भक्ति मार्ग को सर्व साधारण के लिए सुगम, सरल बनाने के लिए पाञ्चरात्र ग्रन्थों का निर्माण हुआ। इस प्रकार 108पाञ्चरात्र ग्रन्थों का निर्माण हुआ। विष्णु के अवतार भार्गव परशुराम ने भार्गव संहिता का उपदेश अगस्त्य ऋषि को दिया।

₹ 225.00

ISBN : 978-81-7080-382-9 ₹ 85.00